محرم نمبر ۱۴۲۶ھ

ماہنامہ

شعاع عمل لکھنؤ

قَالَ اللہُ تبارَکَ وَ تعالٰی

قَدْ جاءَکُمْ مِنَ اللہِ نُوْرٌ وَ کتابٌ مُبِیْنٌ

بیشک اللہ کی طرف سے تمہارے پاس نور آیا ہے اور روشن کتاب

مؤسسۂ نور ہدایت حسینیۂ غفران مآب لکھنؤ-۳

R.N.I.No. UPBIL/2004/13526 - Feb - Mar, 2005

Monthly

SHUA-E-AMAL

Lucknow

शुआ-ए-अमल

हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका

लखनऊ

NOOR-E-HIDAYAT FOUNDATION
Imambara Ghufran Maab, Chowk
LUCKNOW-3 (U.P.) INDIA
Phone : 2252230

वर्ष–1 R.N.I. No. UPBIL/2004/13526 अंक 8–9

माह फरवरी–मार्च 2005 लखनऊ

नूर–ए–हिदायत फ़ाउण्डेशन की हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका

शुआ–ए–अमल

"लखनऊ"

संरक्षक

eksykuk lSdYcst okn udoh lkfgc

सम्पादक

lSequr Qkgq S udoh Pvl hQ+t k; lhS

उप–सम्पादक

gSj vyh

dk;Zdkfj.kh cksMZ

प्रोफेसर सै. हुसैन कमालुद्दीन अकबर, सैय्यद समीउल हसन वसीम, अफ़रोज़ आग़ा, शबीब अकबर नक़वी

वार्षिक – 200 रु

क़ीमत – 20 रु

मिलने का पता

नूर–ए–हिदायत फ़ाउण्डेशन

इमामबाड़ा हज़रत गुफ़रानमआब मौलाना कल्बे हुसैन रोड चौक लखनऊ – 3 (उ.प्र.) भारत फोन न0 0522–2252230

सै. कल्बे जवाद प्रिन्टर, पब्लिशर और प्रोपराइटर ने मासिक शुआ–ए–अमल (उर्दू, हिन्दी) निज़ामी आफ़सेट प्रेस विक्टोरिया स्ट्रीट लखनऊ से और टाइटिल कवर एडर्वटाज़र्स इण्डिया गोलागंज लखनऊ से छपवाकर आफ़िस नूर–ए–हिदायत फ़ाउण्डेशन इमामबाड़ा गुफ़रानमआब मौलाना कल्बे हुसैन रोड लखनऊ–3 से प्रकाशित किया।

फ़ेहरिस्त मज़ामीन

beke gqlSu dh vkyeh 'k[kfl;r

अल्लामा हिन्दी मौलाना सैय्यद अहमद नक़वी मुजतहिद ताबा सराह
अनुवादक – मु0 र0 आबिद साहिब

तास्सुब के ऐनक उतार कर देखो तो संसार का कोई भी मज़हब ऐसा न होगा जिसमें ज़िन्दगी के हर हिस्से में अच्छाइयों और भलाइयोंकी शिक्षा न हो। बात यह है कि हर मज़हब का मूल उद्देश यही होता है कि मानव सुधार करे और मानवता के मान मर्यादा प्रतिष्ठा को बढ़ाये। स्वंभू दार्शनिकों के धर्मों का भी यही उद्देश होता है कि इन्सान के जीवन के हर भाग को ऊँचा रखे और जो इल्हामी (दैव बोधी) मज़हब खुदा की ओर से हैं उनका तो कुछ पूछना ही नही है। बेशक उनके समस्त विधान हुए उस सर्व स्वामी, संसारों के पालने वाले (खुदा) के बनाये हुए हैं जो इन्साफ वाला, न्यायोचित, नीतिज्ञ, सर्वज्ञ, दयालु और करुणानिधान है। उन में बुराई की आशंका भी सम्भव नही। फिर जब कुर्आन मजीद का यह दावा है कि कोई राष्ट्र (क़ौम) नबी रसूल के बिना नही छोड़ा गया है तो हरगिज़ यह मुमकिन नही है कि खुदा की ओर से दुनिया के मज़हबों में विरोध हो और एक–रंगी न हो। मज़हबों की प्राचीनता और उनके मानने वालों को आविष्कार मज़हबों के असली रंग–रूप को बदल कर रूपभ्रष्ट कर देते हैं। इस विरोध (ईश–संदेशवाहक) को मिटाने के लिए समय–समय से नबी (ईश–संदेशवाहक) और रसूल (ईश–दूत) आते हैं। (कुर्आन)

धर्मों की यह एकता बताती है कि समस्त धर्मों में ऐसी बातें मौजूद हैं जो एक दूसरे से मिलती जुलती हैं और वास्तविक शिक्षाओं को दुहराती रहती हैं। खातमुन्नबिय्यीन (अन्तिम नबी हज़रत मुहम्मद स0) ने सभी धर्मगन्थों के मानने वालों को सश्क्त निमन्त्रण दिया था कि ''हम तुम इन बातों में मिलजुल जाएँ जो हम में और तुम में बराबर से हैं और यह कि खुदा की इबादत में किसी दूसरे को शरीक (सम्मलित) न करें'' अर्थात खुदा के अतिरिक्त किसी अन्य की पूजा, उपासना न करें। (कुर्आन मजीद)

दुनिया के मज़हबों ने इस निमन्त्रण को आज मान लिया है। सभी धर्म ईश्वर की तौहीद (एकेश्वरवाद) पर एक और सहमत हैं और इस बारे में ध्रुवीकरण पैदा हो चुका है। ध्रुवी डिक्टेटर व्याख्यानों में उसी एक खुदा का सहारा स्थापित कर रहे हैं। गणतन्त्र भी, बौद्ध मत भी, हिन्दू मत भी, सिख लोग भी, ब्रम्ह समाज, आर्यसमाज, सूफ़ी ईसायी, यहूदी मुसलमान सभी तौहीद का प्रचार कर रहे हैं, किसी न किसी रूप से हो। फिर क्या कारण है कि इस सम्पूर्ण कलमे और तौहीद पर एक–दूसरे से न मिल जाएँ और तुच्छ विवादों की खाड़ी को एकीकृत प्रयत्नों से पाट न दें जिससे कुर्आन और रसूल का मंशा (इरादा) पूरा हो। इसी वजह से सबसे पहले रसूल के नवासे इमाम हुसैन (अ0) ने मार्गदर्शन किया और अपनी महानतम कुर्बानी को अन्तर्राष्ट्रीय बना दिया। क्यों न दुनिया के मज़हब ठण्डे दिलों से अपना और पराया कहना छोड़कर हुसैनी कारनामे का समालोचन, अवलोकन अपने धार्मिक दृष्टिकोण से करके हुसैन (अ0) को अपना न बना ले और उनकी निर्दोषीय शहादत को अपना धार्मिक प्रतिनिधित्व न बनायें।

''पापी मनुष्य धर्म–मार्ग छोड़कर मिथ्या, पाखण्डसे माल को लेकर और बढ़ता है और उसके बाद धन आदि सम्पत्ति, खान–पान, वस्त्र, आभूषण, सवारी, मकान, मान व पद को प्राप्त करता है, अन्याय से दुश्मनों को भी जीत लेता है फिर तुरन्त तबाह हो जाता है।

इस तबाही के कारण ऋग्वेद अस्त अध्याय 3 वर्ग 18 मंत्र 2 में देखों, ''मैं दुराचार, अत्याचारियों को भी आर्शीवाद देता हूँ।'' फिर ऋग्वेद आदि भाषा भूमिका में है, ''मैं परमेश्वर इस राज में जहाँ धर्म का पालन होता है स्थापित होता हूँ। जिस देश में ज्ञान धर्म का उत्थान प्रचार होता है वह मेरा प्रिय स्थान है।''

पता चला है कि जहाँ ज्ञानधर्म का पालन न हो भगवान उस देश को छोड़ देता है जिसका नाश अवश्य हो जाता है। यह तातारियों में तुर्क की राजधानियों की इस हालत को देखो जो अपने अत्याचार, क्रूरता, खूँखारियों (रक्त पान) अज्ञानता, जिहालत, बेशर्मी, बेहयाई, अधर्म, खूँखार दरिन्दों (खतरनाक मासाहारी जानवर) की तरह हो गयी थी। उस समय मानवता के हीरो रसूल (स0) के बेटे अमर शहीद हुसैन (अ0) की इतनी बड़ी कुर्बानी की ज़रूरत हिन्दु मत के सिद्धान्तों पर कितनी ज़रूरी हो गयी थी और परमेश्वर के आशीर्वाद की कितनी पात्र थी।

गौतम ऋषि एक फ़ाख़्ता की जान बचाने के लिए अपनी गर्दन प्रस्तुत करते हैं। क्या उनके काल में यही हो रहा था कि मज़लूम (अत्याचार पीड़ित) मीसम तैम्मार के हाथ पैर काटे जायें और ज़बान काटकर इस लिए सूली दी जाए कि वह रसूल के दामाद अली (अ0) इब्ने अबुतालिब का गुणगान करते थे? क्या गौतम ऋषि के काल में यह भी हो रहा था कि जनाब मुहम्मद इब्ने अबुबक्र खुदा के रसूल के साले और ख़लीफा के बेटे को गधे की खाल में लपेट कर जला दिया जाए और इसलिए कि वह समय के ख़लीफ़ा अली मुर्तज़ा के अनुयायी और पालित–पोषित थे? जनाब रुशैद हिजरी (रसूल (स0) के एक श्रेष्ठ सहाबी) के पेट को चीर कर पत्थर भर कर इसलिए शहीद किया जाए कि वह अली (अ0) के दोस्त थे। रसूल (स0) के बेटे इमाम हसन (अ0) को राजत्याग करने पर भी इसलिए ज़हर दिया जाता है कि अली (अ0) व बतूल (जनाबे सैय्यदा स0) के लाडले थे। ऐसे राज के सम्बन्ध में बौद्धमत ऐसे पापियों के बारे में हुसैन का साथ न देगा? और उनकी संगत को अपने अपने धर्मो के अनुसार मानवधर्म न क़रार दें।

हिन्दुमत की जान अहिंसा है। क्या वह हुसैनी अहिंसा की कोई कार्यात्मक उदाहरण प्रस्तुत करते हैं? इन्साफ से देखों नाना की वफात (देहान्त) पर उनकी इकलौती बेटी को बाप के बिछड़ने पर रोने से रोका जाता है। हुसैन (अ0) के भाई को ज़हर देकर मारा जाता है और नाना रसूल (स0) के पास दफन नही होने देते, लाश पर तीर बरसाते हैं फिर हुसैन (अ0) को रसूल (स0) की क़ब्र पर खामोश बैठने नही देते, हुकूमत (शासन) की माँग है कि बैअत करो या सर दो। हुसैन (अ0) मदीना छोड़कर काबे में शरण लेते हैं, कर्बाला पहुँचकर फुरात नहर के किनारे खेमें गाड़ते हैं फिर खेमें उखाड़े जाते हैं, औरतों बच्चों, सवारी के जानवरों पर तीन दिन तक खाना पानी बन्द किया जाता है फिर बहत्तर प्यासों पर हज़ारों यज़ीदी टूट पड़ते हैं, छः महीने के बच्चे को जिन्दा नहीं छोड़ते, एक ही समय में दिल हिलाने वाले दुखों के पहाड़ इस मज़लूम (बेचारे

पीड़ित) पर ढाये जाते हैं और हुसैन (अ0) हिंसा के मौक़ों को छोड़ते हुए धैर्य, दृढ़ता और सहनशीलता दिखाते हैं। क्या इस अहिंसा की मिसाल (उदाहरण) इतिहास प्रस्तुत कर सकती है? अस्तागफ़िरुल्लाह, तौबा–तौबा।

क्या हुसैन इस अहिंसा की बदौलत इस मातम (सोग) के पात्र नहीं जो मनुजी महाराज की मनुस्मृति अध्याय पाँच में है, ''लड़ाई में तलवार आदि की चोट खाकर जो मर जाए तो उसका क्रियाक्रम उस समय समाप्त हो जाता है और साथ ही साथ पुण्य भी समाप्त हो जाता है परन्तु परदेस में मर जाए और दस वृत पूरे न हों तो दस दिन में जितनी कमी हो उतने दिन उसका सोग करें।''

फिर अध्याय सात में है प्रशंसनीय है योद्धा का धर्म है, युद्ध की दिशा में शत्रुओं को मारना क्षत्रिय इस धर्म को नहीं छोड़ते''

इमाम हुसैन (अ0) ने मानवता की रक्षा में जंग, धर्म रक्षा के लिए जंग, मानवता को भस्म करने वाले दुराचार के विरुद्ध रक्षात्मक युद्ध, बहत्तर जानों की हज़ारोंसे तीन दिन की भूख–प्यास में जंग करना और शहादत के बाद तीन दिन तक अरब के रेगिस्तानी तपती धरती पर लाशों का पड़ा रहना और क्रियाक्रम न होना क्या गौरव के योग्य नही है।

हिन्दू धर्म स्वयं न्याय करे, यदि उस समय मनुजी महाराज कर्बला में होते तो इन दुखी–पीड़ितों का क्या अन्तेष्टि (कफन–दफन) न करते और दस दिन स्वयं सोग करते या न करते। इस लिए कि मानवता की माँग तो यही थी। फिर उनके उपासक (अनुयायी) उनको क्या यह अधिकार नहीं पहुँचता कि इस अन्तर्राष्ट्रीय मानव का पहली मुहर्रम से दस तक मातम (शोक) करें और हुसैन (अ0) की याद मनायें जैसा कि सज्जन–विचार के लोग, मानवता के ध्वजवाहक हिन्दू बहुतात से इस समय भी मज़लूम हुसैन (अ0) की अज़ादारी करते हैं।

हुसैन (अ0) की नबव्वती शान

तौरेत, ज़बूर, इन्जील (सुसमाचार), कुर्आन को साफ़ नज़र से देखो। जिस दुष्कर्म, अत्याचार, अन्याय और बेदीनी (अधर्मिता) के समय नबियों ने बेजिगरी से मुसीबतों (दुखों), तकलीफ़ों (कष्ठों) को सहन किया है, हुसैन (अ0) ने भी अपने काल में अरबों की अत्याधिक बिगड़ी हुई दुर्दशा को सुधारने में भूतपूर्व नबियों से अधिक साहस, मर्दानगी (पौरुष) के साथ अत्याचारी सम्राज्य का मुक़ाबला करके अपनी कुर्बानी पेश (प्रस्तुत) की है और मानवता के सुधार में नबियों के बराबर चलते रहे और वही रंग–ढंग रहा जो नबियों का था और क्यों न होता इसलिए कि हुसैन (अ0) नबियों और रसूलों के वारिस थे। कर्बला के मैदान में अपने कर्म से जिस प्रकार कुर्आनी शिक्षा दे रहे थे उसी प्रकार तौरेत, इन्जील, ज़बूर और नबियों के ग्रन्थों की शिक्षा दे रहे हों।

जब दुनिया वालों के आचरण बिगड़ते, खुदा के रसूल सरों को हथेलियों पर रखे सामने आ जाते थे। हुसैन (अ0) ने भी वही किया और ठीक मौक़ों पर किया। हज़रत मूसा (अ0) की नबुवत का सबसे बड़ा कारनामा यह था कि फिरऔन के अत्याचारों के बचाकर बनी इस्राईल को निकाल लाये। हुसैन (अ0) का क्या यह कारनामा कम है कि अपनी शहादत से खुदा के करोड़ों बन्दों (दासों) को यज़ीदियत से बचा लिया? जनाब ईसा (ईशू मसीह अ0) का ईसाईयों

की दृष्टि में सबसे बड़ा काम सूली पर चढ़ना था। इन्साफ करों हुसैन (अ0) ने अकेले नही बहत्तर जानों से जिनमें छः महीने का बच्चा भी है, खुदा की राह में कुर्बानी दे दी। इसलिए कोई यहूदी, ईसाई नही कह सकता कि हुसैन (अ0) ने उनके सिद्धान्तों और विधानों का पूरा–पूरा प्रतिनिधित्व नही किया। इसलिए इस महान शहादत पर नबियों ने स्वयं शोक का हुक्म दिया (देखो हमारी उूर्द किताब ''नबियों का मातम'') इस मौक़े पर सिर्फ मियाह नबी (अध्याय–46 पेज–90) की भविष्यवाणी सुन लो, ''क्योंकि सेनाओं के नायक स्वामी खुदा के लिए उत्तर की धरती में फ़ुरात नदी के किनारे ज़बीहा (कुर्बानी) निशचित हुई है।

हुसैन (अ0) के अतिरिक्त फ़ुरात के किनारे खुदा की राह में किसकी बलि हुई। इसी जुर्म पर जो दुनिया वालों की नज़र में जुर्म था यानी हुकूमतों (राज्यों) ने जो अपने लिए प्रभुत्व अधिकार समझ लिए थे उसका प्रतिरोध करते थे और दानवता मिटाकर मानवता का मार्गदर्शन करते थे।

ukSgk

अल्लामा फ़ातिर जायसी

घर लिए फिरता है हर दिल बेवतन के वास्ते
आँख साग़र हो गई तशना दहन के वास्ते

शाम जाते खूब रोए लाशे सरवर पर हरम
एक चादर भी न थी बाक़ी कफन के वास्ते

उन सा बाग़ी बढ़ के होगा कौन ज़ेरे आसमाँ
लाए जो तीशा पयम्बर के चमन के वास्ते

इसको कहते हैं मुसीबत इसको कहते हैं मलाल
आसमाँ रोया लहू तशना दहन के वास्ते

कर चुका तजवीज़ मुद्दत से सिपहरे नीलफाम
तीर का काँटा सग़ीरे गुलबदन के वास्ते

सर की चादर भी न छिन जाती तो क्या करते हरम
मुँह छिपाते या उठा रखते कफन के वास्ते

ख़ित्त–ए–यसरिब से आकर कर्बला में हो गई
दुख़्तरे मुशकिल कुशा बन्दे रसन के वास्ते

ले गए ऑदा तो ले जाएँ लिबासे शाहे दीं
चादरे ततहीर बाक़ी है कफन के वास्ते

गर्म थी खाक इसलिए उठकर निगाहे यास ने
छान डाला चर्ख असग़र के कफन के वास्ते

ये क़यामत तक न निकलेगा कभी ए आसमाँ
फातिमा का चाँद आया था गहन के वास्ते

असरे आशूरा को लाईं आँधियाँ उठकर सियाह
भाई की ख़ातिर कफन चादर बहन के वास्ते

लाई थी बच्चे को माँ एक दिन पए नज़रे हुसैन
जब कभी रोए थे बचपन में हिरन के वास्ते

nqfu;k dh loZ'sB gLrh

उमदतुल उलमा मौलाना सैय्यद क़ल्बे हुसैन साहिब मुजतहिद ताबा सराह
अनुवादक – मु0 र0 आबिद साहिब

जब से मानवता का आरम्भ हुआ है और सर्वश्रेष्ठ सृष्टि (इन्सान) अस्तित्व में आयी उस समय तक धरती पर हज़ारों ही ऐसी हस्तियाँ संसार में आईं जिनके कर्म, आचरण, स्वभाव, जनसेवा, भक्ति, आज्ञापालन को ख़ालिक़ (सृष्टिकर्ता) ने दुनिया की ऊँच–नीच में इतना स्पष्ट किया कि हज़ारो बरस बीत जाने के बाद भी कालान्तर के बढ़ते हाथ उनकी याद दिलों से न मिटा सके और कभी न कभी भूलने वालों की कल्पना में उनकी तस्वीरें अपने स्पष्ट रूप–रेखा के साथ घूम ही जाती हैं जिनमें ज्ञान के दृश्य भी हैं और आचरण की कार्यशालाएँ भी हैं, विचार चिन्तण के मोहिनी दृश्य भी है और बेमिसाल सूझ–बूझ के चित्र, राजनीति के मार्गदर्शन भी हैं और शरीयत (धर्म–विधि) के निर्देशन भी।

वह हस्तियाँ भी दुनिया की आखों के सामने हैं जो बस प्रत्यक्ष संसार की सीमाओं के अन्दर अनुकरणीय चरित्र के मालिक थे और वह भी जो मिट जाने वाली दुनिया से आगे बढ़कर चरित्र के बाक़ी रहने वाले रास्तों पर चलने वाले रहे मगर जिसको देखिये उसके कार्यकलाप के आईने में या सिर्फ दुनिया दिखायी देती है या सिर्फ़ दीन (धर्म), सिर्फ़ राजनीति दिखायी देती है या शरीयत, केवल ज़ाहिर नज़र आता है या बातिन, सिर्फ कल्पना की ऊँचाइयाँ मिलती हैं या केवल कर्म की, लेकिन ऐसी हस्ती अन्तः जगत में कमज़ोर नज़र ने ढूँडी तो कोई न मिली जिसके एक कर्म बदल देने से पहलू (कोण) बदलते जाएँ, तस्वीरें बदलती जाएँ, साज–सज्जा बदलती जाएँ, फूल एक हो मगर खुशबू हर तरह की मौजूद, आइना एक हो मगर हर तस्वीर का जलवा, सूरज एक हो किन्तु हर रंग की किरणों का श्रोत, बिन्दु एक हो मगर विचार–परिधि का केन्द्र, अलबत्ता एक, हुसैन (अ0) और केवल हुसैन जिसको कुदरत ने अपने जमाल (सौंदर्य) बल्कि कमाल (पिनुर्णता) का वह बेमिसाल आइना बनाया था जिसने मानवता का लिबास पहनकर मानव जगत को शोभा दी, और ईशवरीय आचरण से गुणवान होकर हर कमाल का दृश्य प्रस्तुत किया। वह हुसैन (अ0) नहीं जो केवल शियों के इमाम हैं बल्कि वह हुसैन (अ0) जो अरब के चश्मो चिराग (आखें और दीपक), वह हुसैन (अ0) जो कुरैश के उत्थान के आकाश, वह हुसैन (अ0) जो जनाब हाशिम की आँखों के तारे, और हज़रत मुहम्मद (स0) के जिगर के टुक्ड़े, हज़रत अली (अ0)के दिल का आनन्द, संसार की महिलाओं की मुख्या जनाब सैय्यदा (स0) की गोदी की शोभा, वह हुसैन (अ0) जिस को खुदा ने शहादत के लिए, रसूल (स0) ने अपने दीन की रक्षा के लिए, अली (अ0) ने अपने शौर्य का वारिस किया, माँ ने अपनी इस्मत (निष्पापिता) का मुस्तहक़ (पात्र) बनाया। हसन (अ0) ने अपनी नियाबत के लिए छाँटा, इस्लाम जग ने इमामत की सनद (प्रमाण–पत्र) प्रदान की, यज़ीद ने अपने अत्याचारों का केन्द्र बनया, तलवारों ने सहन सीमा को परख देखा, नेज़ों ने दिल की गहराईयों को टटोला, तीरों ने अतिथि सत्कार की परीक्षा ली, प्यास ने सहनशीलता की हदें देखीं, हद से बढ़ती हुई गर्मी ने इंसान की ढंडक

से तुलना की, यज़ीद के टिड्डी दल लशकर (सेना) ने धैर्य की परीक्षा ली, यहाँ तक कि आख़िर कर्बला की धरती ने अपनी आशाओं की गोद में लेकर सुकून और चौन की नींद सुला दिया और दुनिया क़ुदरत (ईश्वर–शक्ति) के कमाल के इस प्रतिदर्शक के हालात, आचरण, चरित्र, ज्ञान व कर्म की महानता देखकर सौन्दर्य–मग्न हो गयी।

यही वह ज़ात (व्यक्तित्व) है जो हर भेद–भाव से ऊँचा, हर सीमाबद्धता से परे, हर विभाजन से ऊपर, सभी राष्ट्र, धर्म, सम्प्रदाय, समुदाय बल्कि संसार का दृष्टि–केन्द्र, धर्म के एतबार (सन्दर्भ) से मुसलमानों के इमाम, वीरता की दृष्टि से हर सेना का ध्वजवाहक (प्रमुख), राजनीति की दृष्टि से बड़े से बड़ा लीडर, आचरण के सम्पूर्ण संसार का नेता चरित्र से कार्यनीति का शिक्षक, इस्मत से हर मज़हब का कामिल इन्सान (सम्पूर्ण मनुष्य)।

हमारे नज़दीक यह तत्थ्य नकारा नही जा सकता है कि इमाम हुसैन (अ0) ने अपने पूरे जीवन काल में जो क़दम उठाया वह अल्लाह के दीन की सीमाओं के अन्दर और जो काम किया वह ख़ालिक़ (सृष्टिकर्ता) के बनाये विधान के अनुसार। कर्म का ख़ालिक़ की मर्ज़ी के अनुसार होना हुसैन (अ0) ही का काम था और नतीजे की ज़िम्मेदारी का भार सिर्फ ख़ालिक़ की क़ुदरत (शक्ति, सामर्थ्य) पर था। परन्तु कर्म की विशेषता यह थी कि हर खोजी निगाह को अपना ध्येय जन्नत के जवानों के इस सरदार (स्वर्ग के युवक प्रमुख) की जीवनी में कुछ ऐसे बेमिसाल अन्दाज़ से मिल गया कि हर जानकार इन्सान हुसैन (अ0) के चरित्र को अपनी कर्मनिधि बनाने के लिए खुशी से तैयार हो गया।

मानवता–जगत में यह वैभव केवल हुसैन (अ0) ही का है कि जितना–जितना समय बीतता जाता है उतना ही उतना शहादत का रंग निखरता जाता है और हुसैन (अ0) की क़ुर्बानी में ताज़गी पैदा होती जाती है। आज से कुछ सदी पहले मुसलमानों के अलावा कब किसी अन्य ने इस मज़लूम (उत्पीड़ित) के कारनामों से सबक़ लेने की अपने अनुयायियों को शिक्षा दी थी। परन्तु अब तेरह सौ साल बीत जाने के बाद शहादत का रंग इतना साफ हुआ कि हर मज़हब वाला हर सम्प्रदाय का मानने वाला, हर तरह की राजनीति का प्रमी अपनी क़ौम और अपने समुदाय के सामने हुसैन (अ0) की मिसाल (उदाहरण) प्रस्तुत करना अपनी तबलीग़ (नीति–संचार) का महान अंग समझ रहा है।

यदि मौक़े की मुनासिबत (सामैचित्व) आज्ञा देती तो मैं बिला मुबालिग़ा (अतिश्योक्ति) सैकड़ों ऐसे लीडरों और धर्मनताओं के नाम और उनके कथन प्रस्तुत कर सकता था जो हुसैन (अ0) इब्ने अली (अ0) के अनुसरण और अनुयाय और उनके पदचिन्हों पर चलने की दुनिया से फरमाईश कर चुके और फरमाईश कर रहे हैं।

न मेरे पास वक़्त है और न इतनी गुंजाईश है और फिर इस वजह से कि मेरा उपरोक्त कथन कम से कम हिन्दुस्तान में तो नकारने योग्य नहीं। क्या दुनिया में कोई और भी हस्ती ऐसी सामने लायी जा सकती है जो यूँ दुनिया के समस्त धर्मों, राष्ट्रों के लिए मार्गदर्शक बन सकी हो। नहीं हरगिज़ नहीं। यह हुसैन (अ0) हैं, केवल हुसैन (अ0) जिनकी मुसीबतों की याद ताज़ा करने का ज़माना मुहर्रम है और इसी मुहर्रम माह से हिजरी सन आरम्भ होता है और मुझे यक़ीन है कि दुनिया के न्यायप्रिय हुसैन (अ0) और उनके मानने वालों को हरगिज़ (कदापि) न भूलेंगे जो सबके सब मज़लूम की फिदाई (बलिहारी) और ज़ालिम (अत्याचारी) के दुश्मन हैं।

हुसैन (अ0) मेअराज–ए–इन्सानियत

सैयेदुल उलमा मौलाना अली नक़ी साहिब क़िब्ला (ताबा सराह)
अनुवादक – मौलाना सुफ़यान अहमद नदवी साहिब

पैदाइश – 3 शाबान, 3 या 4 हिजरी
शहादत – 10 मुहर्रम 61 हिजरी

जिस तरह हज़रत इमाम हसन (अ0) की पैदाइश के बारे में दो क़ौल है 2 हिजरी और 3 हिजरी उसी तरह से इमाम हुसैन (अ0) की पैदाइश के बारे में दो क़ौल हैं 3 हिजरी और 4 हिजरी। अगर उनकी पैदाइश 2 हिजरी में हुई तो इनकी 3 हिजरी में है और अगर उनकी पैदाइश 3 हिजरी में है तो इनकी 4 हिजरी में पैदाइश हुई है। इसी तरह रसूल (स0) की वफात के वक़्त इनका छटा या सातवा साल था।

उस ज़माने और उसके बाद अमीर (अ0) के ज़माने में जो कुछ हसने मुजतबा के बारे में कहा जा चुका वह हुसैन (अ0) की सीरत से बिलकुल जुड़ा हुआ है इसलिए कि एक साल के फ़र्क़ से कोई एहसासात, तास्सुरात और ज़रूरतों में कोई फ़र्क़ नही होता। जिन वाक़ेआत से जितना वह मुतास्सिर हो सकते थे उतना ही यह असर ले सकते थे। रसूल (स0) की वफात के बाद से 25 साल का ज़माना जो अमीरुलमोमिनीन ने किनाराकशी इख़्तियार करके गुज़ारा वह जिस तरह उनके लिए आज़माईश का ज़माना था उसी तरह इनके लिए भी था। जो जो हालात सामने आ रहे थे वह इनके सामने भी थे बल्कि इमाम हसन (अ0) को तो दुनिया ने सिर्फ नर्मी करने वाले और शान्ति चाहने वाले की हैसियत से पहचाना इसलिए वह उस ज़माने में उनके इम्तिहानों की बड़ाई को आसानी से महसूस न करे मगर हुसैन (अ0) को दुनिया ने आशूर के दिन की रोशनी में देखा और बड़ी इज़्ज़त और शर्म वाला, खुद्दार, गर्म मिज़ाज और आगे बढ़ने वाला समझा है इस रोशनी में 25 साल की खामोशी के ज़माने पर नज़र डालिये, साफ है कि इनकी जवानी की मन्ज़िलें वही थीं जो हज़रत इमाम हसन (अ0) की थीं। 25 साल की मुद्दत के पूरा होने पर वह तेंतीस साल के थे तो यह बत्तीस साल के, जैसे उम्र के हिसाब से हुसैन (अ0) उस वक़्त अब्बास (अ0) थे। कर्बला में जो अब्बुलफ़ज़लिल अब्बास की जवानी का ज़माना था वह 25 साल की किनाराकशी के बाद हुसैन (अ0) की जवानी का ज़माना था। इस उम्र तक वह सारे क़िस्से सामने आते हैं जो उस ज़माने में पेश आते रहे, और इमाम हुसैन (अ0) खामोश रहे। मुसीबतों और परेशानियों के वह सारे झोंके आए और उनकी खामोशी के समुन्द्र में मौजें न पैदा कर सके।

इनके 25 साल हज़रत अली (अ0) की मक्के की ज़िन्दगी के 13 साल के बराबर हैं वह रसूल (स0) की ख़ामोशी के साथी, यह हज़रत अली (अ0) की खामोशी के साथी। वह हज़रत रसूल (स0) पर जुल्म देख रहे थे जो उनके मजाज़ी (ग़ैर हक़ीक़ी) हैसियत से बाप थे और यह हज़रत अली (अ0) पर जुल्म देख रहे थे जो इनके हक़ीक़ी हैसियत से बाप थे जिस तरह वहाँ कोई तारीख़ नही बताती कि किसी एक बार भी अली (अ0) को जोश आ गया हो और रसूल (स0) को अली (अ0) को रोकने की ज़रूरत पड़ी

हो, उसी तरह कोई रिवायत नहीं बताती कि इस 25 साल के लम्बे ज़माने में कभी हुसैन (अ0) को जोश आ गया हो और हज़रत अली (अ0) ने बेटे को रोकने की ज़रूरत महसूस की हो या समझाने की कि यह न करो, इससे हमारे मक़सद या उसूल को नुक़सान पहुँचेगा।

इसके बाद वह वक़्त आया कि जब हज़रत अली (अ0) ने जिहाद के मैदान में क़दम रखा। तो अब जहाँ हसन (अ0) थे वहीं हुसैन (अ0) भी थे वह बाप की दाहिनी तरफ तो यह बायीं तरफ। हर लड़ाई में अमली हैसियत से शरीक हैं। इसके बाद जब सुलहनामा लिखा गया तो जहाँ बड़े भाई के दस्तख़त वहीं छोटे भाई के दस्तख़त। जनाब अमीर (अ0) की शहादत के बाद इसी तरह यह हज़रत इमाम हसन (अ0) के साथ हैं जिहाद में भी और सुल्ह में भी। अबुहनीफा दनेवरी ने अलअख़बरुत तिवाल में लिखा है कि सुल्ह के बाद दो शख़्स इमाम हसन (अ0) के पास आए। यह जज़्बाती क़िस्म के दोस्त थे सही समझ नहीं रखते थे उन्होंने सलाम किया :–

''अस्सलामु अलैइका या मुज़िल्लुल मोमिनीन''

''ऐ मोमिनों को ज़लील करने वाले आपको सलाम हो''

यह अपने ख़याल में मोमिन हैं जिनका यह एख़लाक़ है और यह उनका बड़ा एख़लाक़ है कि ऐसे अलफाज़ के साथ जो सलाम हो उसका भी जवाब देना लाज़िम समझते हैं और मलामत के साथ फरमाते हैं।

लस्तो मुज़िल्लुहुम बल मुइज़्ज़ुहुम

मैंने मोमिनों को ज़लील नही किया बल्कि उनकी इज़्ज़त रख ली इसके बाद उनके थोड़ी सी सुल्ह की वजहे बतायीं जिस पर वह खामोश से हो गए और अब वह उठकर इमाम हुसैन (अ0) के पास आए और खुद ही यह क़िस्सा पेश किया कि हम से इमाम हसन (अ0) से बात–चीत हुई है। आप ने इमाम हसन (अ0) का जवाब सुनने के बाद फरमाया : सदूक़ा अबु मुहम्मद यानी हज़रत इमाम हसन (अ0) ने बिलकुल सच फरमाया। मौक़ा ऐसा ही था और उस मौक़े की ज़रूरत भी यही थी।

कुछ सूरमा क़िस्म के आदमी आए और उन्होंने कहा : आप हसने मुजतबा (अ0) को छोड़िये, वह सुल्ह के उसूल पर बाक़ी रहें मगर आप उठिये हम आपके साथ हैं अचानक हुकूमते शाम पर हल्ला बोल दें। इमाम हुसैन (अ0) ने फरमायाः ग़लत बिलकुल ग़लत, हम ने अहद कर लिया है और अब हम पर इसका एहतेराम ज़रूरी है हाँ उसी वक़्त हज़रत ने यह कह दिया कि तुम में से हर एक को उस वक़्त तक बिलकुल चुप–चाप बैठा रहना चाहिए जब तक यह शख़्स यानि मुआविया ज़िन्दा है। यह आपकी समझदारी थी। आप जानते थे कि मुआविया की तरफ से आख़िर में और शर्तों के साथ इस शर्त की मुख़ालिफत होगी कि उन्हें अपने बाद किसी को नामज़द नही करना चाहिए, उस वक़्त हमें उठने का मौक़ा होगा।

अब कौन कह सकता है कि हसन (अ0) की सुल्ह के बाद हुसैन (अ0) की जंग किसी पालीसी का बदलना, शर्मिन्दगी या पशेमानी या राय के अलग–अलग होने का नतीजा थी? 20 साल पहले कहा जा रहा है कि हमें उस वक़्त तक ख़ामोश रहना चाहिए जब तक मुआविया ज़िन्दा है इससे ज़ाहिर होता है कि 20 साल के लम्बे रास्ते के सारे पत्थर नज़र के सामने हैं और

पूरा प्रोग्राम पहले से बना हुआ तैयार है इसके मानी यह है कि लम्बी ख़ामोशी भी उसी अहद के लिए ज़रूरी है और उस वक़्त क़दम बढ़ाने का भी उसी अहद के लिए हक़ होगा। क्या इसके बाद भी इसमें कोई शक है कि हसने मुजतबा (अ0) की सुल्ह हुसैन इब्ने अली की जंग की एक शुरुआत ही थी और कुछ नहीं।

41 हिजरी में यह सुल्ह हुई और 60 हिजरी में मुआविया ने इन्तिक़ाल किया इस बीस साल के लम्बे ज़माने में क्या–क्या मुश्किलात सामने आए और हुकूमत के लोगों ने क्या–क्या तकलीफ़े पहुँचायीं मगर इन सारे हालात के बाद भी जिस तरह रसूल (स0) के साथ अली (अ0) मक्का की तेरह साल की ज़िन्दगी में, जिस तरह हज़रत अली (अ0) के साथ हसन मुजतबा (अ0) और खुद हुसैन (अ0) 25 साल की किनाराकशी के ज़माने में, उसी तरह हज़रत इमाम हसन (अ0) के साथ इमाम हुसैन (अ0) दस साल के उनकी ज़िन्दगी के ज़माने में जो सुल्ह के बाद था जबकि उस ज़माने के हालात को वह किन गहरे दिली असरात के साथ देखते थे उन का अन्दाज़ा खुद उनके ही अल्फाज़ से होता है जो उन्होंने हज़रत इमाम हसन (अ0) के जनाज़े पर मरवान से कहे थे, जब मरवान ने हसन (अ0) की वफात पर अफसोस ज़ाहिर किया तो इमाम हुसैन (अ0) ने फरमाया कि अब अफसोस कर रहे हो और ज़िन्दगी में उनको तुम ग़म और गुस्से के घूँट पिलाते थे जो कि याद हैं मरवान ने जवाब दिया बेशक! वह ऐसे के साथ था जो इस पहाड़ से ज़ियादा बर्दाश्त करने वाला और सुकून वाला था।

यह तारीफ उस वक़्त मरवान हज़रत इमाम हुसन (अ0) की कर रहा था जो दुनिया से उठ चुके थे। मगर क्या इस तारीफ में खुद हुसैन (अ0) भी हिस्सा न रखते थे? क्या इस लम्बे ज़माने में उन्होंने कोई हरकत की जो हसने मुजतबा के सुकून के मसलक के ख़िलाफ होती? फिर इमाम हसन (अ0) के जनाज़े के साथ जो नापसन्दीदा सूरत पेश आई वह रसूल (स0) के रौज़े पर दफन से रोका जाना। वह तीरों का बरसाया जाना, यहाँ तक कि कुछ तीरों का इमाम हसन (अ0) के जिस्म तक पहुँचना। यह सब्र वाले हालात और इन सबको इमाम हुसैन (अ0) का बर्दाश्त करना।

कोई शायद कहे कि हुसैन क्या करते? बेबस थे मगर क्या कर्बला में हुसैन को देखने के बाद वह यह कहने का हक़ रखता है? कर्बला में तो सामने कम से कम 30 हज़ार थे और हसन (अ0) के जनाज़े पर रास्ता रोकने वाली जमात ज़ियादा से ज़ियादा कई सौ होगी। हुसैन के साथ अब्बास (अ0) भी है जो उस वक़्त 22 साल के मुकम्मल जवान थे जनाब मुहम्मदे हनफिया भी थे जिनकी बहादुरी का तजुर्बा दुनिया को हज़रत अली इब्ने अबी तालिब (अ0) के साथ जमल और सिफ्फीन में हो चुका था। मुस्लिम बिन अक़ील भी थे जिन्हें बाद में पूरे कूफा के मुक़ाबिले में अकेले हुसैन ने भेज दिया और उन्होंने अकेले वह बेमिसाल बहादुरी दिखायी जो तारीख़ में यादगार है।

अली अकबर (अ0) भी एक पक्के क़ौल के हिसाब से उस वक़्त 15 साल के थे जो कर्बला के क़ासिम से ज़ियादा उम्र वाले थे और तमाम बनी हाशिम भी थे फिर कुछ तो आले रसूल (स0) के वफादार गुलाम और दूसरे मददगार और अन्सार भी मौजूद ही थे इस सूरत में हज़रत इमाम हुसैन (अ0) के अमल को बेबसी का नतीजा समझना

कहाँ ठीक हो सकता है।

मगर हुसैन (अ0) ख़ामोश रहते हैं और इन सबको ख़ामोशी पर मजबूर रखते हैं इमाम हसन (अ0) का जनाज़ा वापस ले जाते है जन्नतुल बक़ी में दफन कर देते हैं और इसके बाद दस साल हसनी सुल्ह के तरीक़े पर गुज़ार देते हैं और इस तरह यह साबित हो जाता है कि वह बड़े भाई का दबाव या मेहरबानी और इज़्ज़त का तक़ाज़ा न था बल्कि इस्लाम के फाएदे का लिहाज़ था जिसके वह भी हिफाज़त करने वाले थे और अब यह भी हिफाज़त करने वाले हैं।

और इधर शाम की हुकूमत की तरफ से इस सारे ज़माने में हर–हर शर्त की मुख़ालिफत हो रही थी। चुन–चुन कर अली (अ0) के दोस्तों को क़त्ल किया जा रहा था और वतन से निकाला जा रहा था। कैसे–कैसे लोग? हिज्र बिन अदी (रज़ि0) और उनके 16 साथी। यह दमिश्क़ के बाहर मर्जे अज़रा में सूली चढ़ा दिए जाते हैं।

हाफ़िज़ इब्ने हजर अस्क़लानी लिखते हैं कि यह हिज्र बिन अदी (रज़ि0) बड़े सहाबियों में से थे। फ़िक़ह के मसाएल में अगर इनके मसले इकटठा किए जाएँ तो एक हिस्से का रिसाला हो जाए। मगर अली (अ0) के दोस्त थे इसलिए इनकी सहाबियत भी काम न आ सकी। कूफा से क़ैद करके दमिश्क़ बुलवाए गए, शाम के हाकिम ने अपने दरबार में बुलाकर इनसे पूछ–ताछ करने या सफाई देने का भी मौक़ा पसन्द न किया। हुक्म हुआ कि शहर के बाहर ही रोक दिए जाएँ और वहीं सूली दे दी जाए। इनकी शहादत इतनी दर्दनाक थी कि अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि0) ने इसका बयान सुना तो चीख़ें मार कर रोने लगे। उम्मुल मोमिनीन आएशा (रज़ि0) को ख़बर हुई तो उन्होंने कहा : आख़िर मुआविया ख़ुदा को क्या जवाब देगा, कि ऐसे–ऐसे नेक मुसलमानों का खून कर रहा है।

अम्र बिनुल हमक़ अलख़ज़ाई वह बुज़ुर्ग थे जिन्हें रसूल (स0) ने ग़ाएबाना तौर पर अपना सलाम पेश किया था उनका सर काट कर नेज़े की नोक पर उठाया गया, यह सबसे पहला सर था, जो इस्लाम में नेज़े पर उठाया गया।

इन हादसों से अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि0) और आएशा (राज़ि0) बिन्ते अबिबक्र ऐसे लोग इतना मुतास्सिर थे तो हुसैन (अ0) इब्ने अली (अ0) जिनके बुज़ुर्ग वालिद की मुहब्बत के बदले में ही यह सब हो रहा था जितना भी मुतास्सिर होते कम था।

फिर हज़रत इमाम हसन (अ0) की दस साल तक खामोशी और आगे न आने की जो क़ीमत उनको मिली यानी क़त्ल किया जाने वाला ज़हर और कलेजे के बहत्तर टुक्ड़े और फिर उनकी वफात पर दमिश्क़ के महल से खुशी दिखाने के लिए अल्लाहु अकबर की ऊँची आवाज़ इन सब बातों के बाद हज़रत इमाम हुसैन (अ0) की ख़ामोशी। क्या किसी में हिम्मत है जो उस वक़्त के हुसैन पर जंग करने का इल्ज़ाम लगा सके?

अब इसके बाद वह हंगामा सामने आया जिसे इमाम हुसैन की आँखें बीस साल पहले देख रहीं थीं यानि शाम के हाकिम ने अपने बेटे यज़ीद की ख़िलाफत की बुनियाद डाल दी और उसके लिए इस्लामी दुनिया का दौरा किया।

अब इमाम हुसैन (अ0) के लिए वह रास्ता सामने आ गया जो बैअत के इन्कार से शुरु हुआ और आख़िर तक बैअत के इन्कार ही की शक्ल

में बाक़ी रहा।

फिर इस बैअत के इन्कार को क्या कोई वक़्ती, जज़बाती फैसला या हंगामी जोश का नतीजा समझा जा सकता है?

याद रखना चाहिए कि बैअत का इन्कार तो अभी तक क़ानूनी जुर्म न बना था। ख़िलाफते सलासा में बहुत से लोगों ने बैअत न की। हज़रत अली (अ0) के दौर में अब्दुल्लाह इब्ने उमर (रज़ि0) ने बैअत नही की उसामा इब्ने ज़ैद (रज़ि0) ने बैअत नहीं की, साद इब्ने वक़ास ने बैअत नही की, हस्सान बिन साबित ने बैअत नही की, मगर इन बैअत न करने वालों का क़त्ले वाजिब नही समझा गया।

इमाम हुसैन (अ0) ने बैअत न करके अपने को बातिल की हिमायत से अलग कर किया बस! इसके अलावा कोई क़दम नही उठाया, मगर मुआविया के बाद जब यज़ीद हुकूमत में आया तो उसने पहला ही हुक्म अपने गवर्नर वलीद को भेजा कि हुसैन (अ0) से बैअत लो और बैअत न करें तो उनका सर क़लम करके भेज दो। यह सख़्ती की शुरुआत किधर से हो रही है? मदीने के हाकिम को इस हुक्म के पूरा करने की हिम्मत न हुई तो उसे हटा दिया गया। इमाम हुसैन (अ0) को अगर सख़्ती से काम लेना होता तो आप मुआविया के हलाक होने की ख़बर सुनते ही मदीने के तख़्त व ताज पर क़ब्ज़ा कर लेते जो उस वक़्त उनके लिए कुछ मुशकिल न था। इसके बाद कम से कम इस्लामी दुनिया बंट तो ही जाती मगर आप ऐसा नही करते बल्कि मक्के जाकर मक्के में पनाह लेने के मानी यह हैं कि हमें किसी की जान नही लेनी है अपनी जान बचानी मन्जूर है, यह ''हम वजूदी'' का अमली पैग़ाम है।

देखने में अगर यहाँ ठहरने का इरादा हमेशा का न होता तो हज का एहराम क्यों बाँधते? हज का एहराम बाँधना खुद हज की नियत की दलील है और नियत के बाद बिना वजह हज तोड़ना जाएज़ नहीं। हज़रत इमाम हुसैन (अ0) से बढ़कर शरीअत के मसलों को कौन जानता होगा और यह उनकी मुख़ालिफत करने वाला भी ख़याल नही कर सकता कि वह जान–बूझ कर शरीअत के हुक्म की (माआज़ल्लाह) मुख़ालिफत करेंगे और वह भी कब? जब हज को सिर्फ एक दिन बाक़ी है।

वह जिन का शौक़ यह था कि मदीने में आ–आ कर 25 हज पैदल कर चुके हैं अब मक्के में मौजूद होते हुए हज को उमरे में बदल देते और मक्के से चले जाते हैं। इस तरीक़े से खुद नज़र आता है कि इसकी वजह ग़ैर मामूल और हंगामी है तो हर एक पूछ रहा था और बड़ी वहशत और परेशानी के साथ। ''अरे! आप इस वक़्त मक्का छोड़ रहे हैं?''

यह हर सवाल इमाम (अ0) के दिल पर एक तीर था। हर एक से कहाँ तक बताते, किसी–किसी से कह दिया कि न निकलता तो वहीं क़त्ल कर दिया जाता और मेरी वजह से ख़ान–ए–काबा की हुरमत बरबाद हो जाती।

मक्के में आना भी ख़तरे का जहाँ तक टालना था और अब मक्के से जाना भी यही है अब आप कूफा तशरीफ लिए जा रहे हैं। जहाँ के लोगों ने आपको अपनी दीनी हिदायत और एख़लाक़ी सुधार के लिए दावत दी मगर बीच में फौजे हुर आकर रास्ता रोकती है अब आप पहला काम यह करते हैं कि उस पूरी फौज को जो प्यासी है पानी पिला देते हैं। यह फैय्याज़ी भी जंगी अन्दाज़ से

बिलकुल अलग है इसके बाद वह मौक़ा आया कि नहर पर ख़ेमों के लगाने को रोका गया उस वक़्त साथियों की तेवरियों पर बल थे मगर इमाम (अ0) ने फरमाया कि मुझे जंग में शुरुआत करनी नही है। रेत पर ही ख़ेमे लगा लो। यह नफ्स पर रोक और कन्ट्रोल व बर्दाश्त वह कर रहा है जिसे आख़िरकार जान पर खेल जाना और अपना पूरा घर कुर्बान कर देना है मगर वह उस वक़्त होगा जब उसका वक़्त आयेगा और यह उस वक़्त है जब इसका वक़्त है।

फिर उमरे साद कर्बला में पहुँचता है तो आप खुद उसके पास सुल्ह की बात–चीत के लिए पैग़ाम भेजते हैं, मुलाक़ात होती है तो शर्तें ऐसी रखते हैं कि इब्ने साद खुद अपने हाकिम अब्दुल्लाह बिन ज़ियाद को लिखता है कि लड़ाई और झगड़े की आग ठण्डी हो गई है और अमनो सुकून में कोई रुकावट न रही। हुसैन मुल्क छोड़ने तक के लिए तैयार है इसके बाद खून बहाने की कोई वजह नही।

अब यह तो मुख़ालिफ जमात का काम है कि उसने ऐसे सुल्ह वाले ख़याल की इज़्ज़त न की और सुल्ह के लिए बढ़े हुए हाथ को झटककर पीछे हटा दिया लेकिन इस शर्त पर मुख़ालिफ हुकूमत राज़ी हो गई होती। फिर हज़रत इमाम हसन (अ0) और इमाम हुसैन (अ0) की फितरत में किसी एख़तिलाफ का ख़याल करने वालों के ख़याल की क्या बुनियाद बाक़ी रह सकती है और सूरतेहाल के समझने के बाद अब भी यह ख़यालात तो ग़लत साबित हो ही गए मगर वह इब्ने ज़ियाद की फिरऔनियत और यज़ीद की चाहत को पूरा करना था कि उसने हज़रत इमाम हुसैन (अ0) पर सुल्ह के सभी रास्तों को बन्द कर दिया।

फिर भी जब नवीं तारीख को तीसरे पहर हमला हो गया तो हज़रत (अ0) ने एक रात की मोहलत ले ली। जिसे जंग करना ही था वह जंग ख़त्म करने की दरख़ास्त क्यों करता, मगर इस एक रात की मोहलत को हासिल करके भी आपने अपनी अमन पसन्दी का सबूत दिया और दिखला दिया कि जंग तो मुझ पर ज़बरदस्ती लादी जा रही है मैं जंग का अपनी तरफ से शौक़ नही रखता हूँ।

फिर आशूर की सुब्ह कोई वक़्त ऐसा नही छोड़ा जो नसीहत, दलील के पूरा करने और वसीयत करने में न लगाया हो, खुत्बा जो पढ़ा वह ऊँट पर सवार होकर पढ़ा कि वह अमन की सवारी है घोड़े पर नहीं सवार हुए जो जंग को भड़काने वाला होता है।

इसके बावजूद कि खुत्बे के जो जवाब मिले वह दिल तोड़ने वाले थे मगर इसके बाद भी आपने इस का इन्तिज़ार किया कि दुश्मन की फौज से शुरुआत हो और जब पहला तीर उमरे साद ने चिल्ल–ए–कमान में जोड़ कर अपनी फौज से कहते हुए यह कहकर लगाया कि ''गवाह रहना पहला तीर हुसैनी फौज की तरफ मैं छोड़ रहा हूँ।'' और इसके बाद चार हज़ार तीर कमानों से चल गए और हुसैनी जमात की तरफ आ गए। उस वक़्त मजबूर होकर इमाम (अ0) ने जिहाद की इजाज़त दे दी और इसके बाद भी खुद उस वक़्त तक जिहाद के लिए तलवार नियाम से नहीं निकाली जब तक आप की ज़ात में इन्हेसार नही हो गया जब तक एक भी बाक़ी रहा तलवार नही चलाई और इस तरह पैग़म्बर (स0) के किरदार की तफसीर कर दी जब कोई न रहा उस वक़्त तलवार खींची और यह ऐसा वक़्त था जब किसी दूसरे में दम न होता कि वह हिल भी सके। तीन दिन की भूख प्यास और इस

पर सुब्ह से शाम तक सूरज की गर्मी में शहीदों की लाशों का उठाना और फिर ख़ैमे की तरफ पलटना और फिर बहत्तर के दाग़, अज़ीज़ों के सदमें और उनकी लाशों का उठाना, जवान बेटे का आँख की रौशनी ले जाना और भाई का कमर तोड़ जाना, और अपने हाथों पर एक दूध पीते बच्चे का दम टूटते हुए सम्भालना और तलवार की नोक पर अभी–अभी उसकी क़ब्र बनाकर उठना। अब इस हाल में नफ्स के जज़बात का तक़ाज़ा तो यह है कि आदमी ख़ामोशी से तलवारों के सामने अपना सर बढ़ा दे और खंजर के आगे गला रख दे मगर हुसैन (अ0) इस्लामी तालीम की हिफाज़त करने वाले थे जुल्म के सामने सुपुर्दगी शरीअत के क़ानून के ख़िलाफ है। हुसैन (अ0) ने अब बचाव का फ़र्ज़ अन्जाम देने और खुदा के दुश्मनों के मुक़ाबले के लिए तलवार उठाई और वह जिहाद क्या जिसने भूली हुई दुनिया को हैदर (अ0) वाली ख़ूबियों की याद दिला दी और इस तरह दिखा दिया कि हमारे काम और अमल, नफ्स के जज़बात और तबीयत की ज़रूरतों के गुलाम नही हैं बल्कि फराएज़ और वाजिबात को पूरा करने और रब के हुक्मों को पूरा करने के गुलाम होते हैं चाहे फितरी ज़रूरतें इसके कितनी ही ख़िलाफ हों।

यही इन्सानियत की वह मेअराज है जिसको इमाम हुसैन (अ0) के बाद वाले बताते रहे और वही आज हुसैन (अ0) के किरदार में बहुत ही चमक के साथ नज़र आ रही है।

dcZyk

आसीफ़ जायसी

कर्बला ममनून है संसार तेरा आज तक
नौऐ इन्सानी को है इक़रार तेरा आज तक

किस क़दर दुरबार है दरबार तेरा आज तक
ज़र्रा–ज़र्रा है दुरे शहवार तेरा आज तक

सोने वालों को जगाती है सदाए इंक़िलाब
है सफर में जज़्ब–ए–बेदार तेरा आज तक

ता क़यामत मदरसा है तू ज़माने के लिए
शहर है कुर्आने लाला ज़ार तेरा आज तक

शरबते दीदार में तेरे है मेराजे हयात
कौन है आसूद–ए–दीदार तेरा आज तक

ओढ़ ली तू ने रिदाए ज़िन्दगी, है इसलिए
मौत से अज़ाद हर बीमार तेरा आज तक

हाकेमियत क्यों बशर की लरज़ा बर अन्दाम है
कल से लेकर जारी है इन्कार तेरा आज तक

नफ़्स की तामीर होती है तेरे माहोल में
काम में मसरूफ है मेअमार तेरा आज तक

तेरी खुशबु–ए–वफा से है मुअत्तर काएनात
किस क़दर शादाब है गुलज़ार तेरा आज तक

सर यज़ीदियत उठाए भी तो वह कैसे उठाए
जौरो इस्तेबदाद पर है वार तेरा आज तक

तेरे मक़सद पर कभी भी आँच आ सकती नहीं
है पसे पर्दा अमानत दार तेरा आज तक

आलमे इन्सानियत की कर रहा है शान से
रहनुमाई क़ाफिला सालार तेरा आज तक

क्या हक़ीक़त है ''आसीफ़े जायसी'' की सच यह है
मोतक़िद है हर बड़ा फन्कार तेरा आज तक

हुसैनी जिहाद की इनफिरादियत

आयतुल्लाह अलउज़मा सैय्यद अली खामनाई मद्दजिल्लहुल आली
अनुवादक – सै0 हुसैन हैदर अकबरपुरी

एक ऐसा इन्सान, बहुत पाक मक़सद के रास्ते में जिसे दुनिया के सारे इन्साफ पसन्द लोग क़बूल करते हैं, बहुत ही सख़्त कोशिश शुरु करता है और बड़ी सख़्त मुसीबतें उठाता है। यह बड़ा अजीब जिहाद है। दोस्तों के अच्छे नारों के बीच क़त्ल हो जाना आसान है। जब हक़ और बातिल की सफें लगी हों एक तरफ हक़ की फौज हो और दूसरी तरफ बातिल की फौज, और रसूल (स0) या हज़रत अली (अ0) जैसी शख़सियत के हाथ में हक़ के महाज़ की कमान हो और वह कह रहे हों कि मैदाने जंग में जाने के लिए कौन तैयार है? सभी तैयार हो जाएँगे। मैदान में जाने वाले के लिए रसूल (स0) दुआ करते हैं उसके सर पर मुहब्बत का हाथ फेरते हैं और खुद उसे रुख़सत करते हैं। मुसलमान इसके लिए दुआ करते हैं ऐसी फ़िज़ा में मुजाहिद मैदाने जंग में जाकर जिहाद करता है और शहीद होता है। जिहाद और शहादत का यह एक अन्दाज़ है। लेकिन जिहाद का एक अन्दाज़ वह भी है कि जब इन्सान मैदाने जंग में जा रहा है तो सारा समाज या उसका मुख़ालिफ है या उससे अन्जान है। लोग उससे दूरी इख्तियार करते हैं या उसके मुक़ाबले में सफबन्दी करते हैं। यहाँ तक कि जो लोग दिल की गहराईयों से उसके बहादुरी के क़दम की तारीफ करता है उनकी तादाद इतनी कम है कि वह अपना नज़रिया ज़बान से बयान करने की भी जुर्रत नही कर पाते।

आशूर के अलमिये में हालात इतने सहमे हुए हैं यहाँ तक कि अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास और अब्दुल्लाह इब्ने जाफर जैसे लोग भी जिनका तअल्लुक़ बनी हाशिम से है और इसी शजरे तय्यबा की शाख़ हैं, इमाम हुसैन (अ0) की खुलेआम मदद नहीं कर सकते। मक्का और मदीना में आपके हक़ में खुलेआम नारे नही लगा सकते। यह बड़ा अजीब व ग़रीब जिहाद है, सबसे सख़्त जिहाद यही जिहाद है। इस मुजाहिद के सब दुश्मन हैं, सब इससे अलग हैं, यहाँ तक कि दोस्त भी इसके क़रीब आते हुए डरते हैं। जब इमाम हुसैन (अ0) एक शख़्स से मदद माँगते हैं और उसे अपने साथ आने की दावत देते हैं तो वह खुद आने के बजाए अपना घोड़ा पेश कर देता है कि इसे आप (अ0) अपने काम में लाइये। क्या मज़लूमियत और तनहाई इससे बढ़कर ख़याल की जा सकती है? क्या इससे भी ज़ियादा बेबसी का जिहाद हो सकता है? इस मज़लूमाना जिहाद में आप (अ0) की आँखों के सामने आप (अ0) के बहुत क़रीबी लोग शहीद कर दिये गए, आप (अ0) के बेटे, भतीजे, भाई बनी हाशिम के फूल आप (अ0) की निगाहों के सामने टुक्ड़े–टुक्ड़े कर दिए गये यहाँ तक कि आपका छः माह का बच्चा भी शहीद कर दिया गया।

इन सब मुसीबतों के अलावा आप (अ0) को यह भी मालूम है कि आप (अ0) के पाक जिस्म से रूह के निकलते ही आपके निहत्थे घर वालों

पर हमला किया जायेगा। यह भूखे भेड़िये उनके ख़ेमों को लूट लेंगे, उन्हें ग़ुलाम बनाएँगे, उनकी बेइज़्ज़ती करेंगे। अमीरुलमोमिनीन अलैहिस्सलाम की बड़ी अज़मत वाली बेटी जे़नबे कुबरा सलामुल्लाहि अलैइहा (जो आलमे इस्लाम की एक अहम और बुजुर्ग शख़सियत हैं) की शान में गुस्ताखी और बेइज़्ज़ती करेंगे। इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम इन सारी बातों को जानते थे और इसके बावजूद भी जिहाद और मुक़ाबला कर रहे थे। यह जिहाद कितना मुशकिल है?

इसके अलावा आप प्यासे भी थे। आपके ख़ानदान वाले प्यासे थे, नन्हे–नन्हे बच्चे प्यासे थे, बूढ़े प्यासे थे, दूध पीता बच्चा प्यासा था, साथी और दोस्त प्यासे थे, सबके सब प्यासे थे, अब ज़रा ख़्याल कीजिये कि ऐसे हालात में कोई तहरीक चलाना, कोशिश करना और जिहाद व मुक़ाबला करना कितना मुशकिल और कठिन काम है?

वह तैय्यब व ताहिर, पाक व पाकीज़गी वाला इन्सान जिसकी ज़ियारत से बरकतें हासिल करने के लिए आसमानी फरिश्ते एक–दूसरे से आगे बढ़ जाने की कोशिश करते हों। जिसके मक़ाम और दर्जों तक पहुँचने की अम्बिया व औलिया को आरज़ू हो, एक ऐसे सख़्त और मुशकिल जिहाद में बहुत बड़ी मुसीबत और परेशानियों को बर्दाश्त करके शहीद हो जाता है। कौन ऐसा इन्सान है जो इस शहादत के क़िस्से को सुने और उसके जज़्बात पर ज़ख़्म न लगे, उसके दिल को चोट न पहुँचे? कौन ऐसा इन्सान है जिसे इस हादसे की जानकारी हो और उसके दिल में इस क़िस्से से लगाव न पैदा हो। यह वह जोश मारता हुआ चश्मा है जो आशूर के दिन फूटा था। इस की शुरुआत उस वक़्त हुई जब इस रिवायत की बिना पर जनाबे ज़ैनबे कुबरा सलामुल्लाहि अलैइहा ने ''तिल्ले ज़ैनबियह'' के ऊपर जाकर नाना से कहते हुए फरमाया :–

''ऐ खुदा के रसूल (स0)! आप पर तो आसमान के फरिश्तों ने नमाज़ पढ़ी। लेकिन यह आपका नवासा हुसैन मिट्टी और धूल में सना है बिना कफ़न और बिना क़ब्र के पड़ा हुआ है। नाना इसके जिस्म के टुकड़े–टुकड़े कर दिये गए हैं। इसके जिस्म से पगड़ी और चादर भी उतार ली गई है।''

जनाबे ज़ैनब ने वहीं खड़े होकर इमाम हुसैन (अ0) की मुसीबतें बयान कीं। बीबी वह सारे क़िस्से बयान करने लगीं जिन्हें संगदिल छुपाना चाहते थे। आप (अ0) ने बुलन्द आवाज़ में उन क़िस्सों को सामने किया और हर एक जगह पर इसका एलान किया। कर्बला में बयान किया, कूफा में बयान किया, शाम में बताया, मदीने वालों को आगाह किया, यह चश्मा इसी तरह उबलता रहा और दिन बदिन इसका जोश बढ़ता रहा और आज भी यह चश्मा उबल रहा है।

यादे हुसैन और मजलिसे अज़ा नेअमत है

जब तक इन्सान को नेअमत नही मिलती, उससे उस नेअमत के बारे में सवाल भी नही किया जाता। लेकिन जब नेअमत मिल जाती है तो फिर नेअमत पाने वाले की ज़िम्मेदारियाँ भी बढ़ जाती हैं। इस नेअमत के बारे में उससे पूछ–ताछ होगी।

हमारा शीआ समाज मुहर्रम और आशूर की नेअमत से माला माल है। अफसोस है कि हमारे ग़ैर शीआ मुसलमान भाईयों ने अपने को इस नेअमत से महरूम कर रखा है। वह भी खुद को इस बड़ी नेअमत में शरीक कर सकते हैं। मगर कुछ जगहों पर ग़ैर शीआ मुसलमान भी इमाम हुसैन (अ0) का सोग मनाते हैं लेकिन यह सोग

आमतौर से उनके यहा होता नही है, हम शीओं के यहा ही चलता है।

इस यादगार और उन मजलिसों से हमें क्या फायदा उठाना चाहिए? इस नेअमत का शुक्र क्या है? यही वह चीज़ है जिसे मैं सवाल की शक्ल में आपके सामने पेश कर रहा हूँ। आप इसका जवाब दीजिये। यह अज़ीम नेअमत, दिलों को इस्लामी ईमान के जोश मारते हुए चश्में से जोड़ती है। इस नेअमत ने ऐसे अज़ीम कारनामे अन्जाम दिये हैं कि ज़ालिम और सितम करने वाले हाकिम, आशूर और इमामे हुसैन (अ0) की क़ब्र से हमेशा डरते रहे हैं। यह डर उमवी ख़लीफा के ज़माने में शुरु हुआ और आज तक बाक़ी है और आप इसका एक नमूना खुद हमारे अपने इन्क़लाब में देख चुके हैं। इन्क़लाब के दौरान जब मुहर्रम का महीना आया तो बुरे, काफिर, और झूठे रजअत पसन्द पहलवी निज़ाम ने अपने को बिना हाथ पैर वाला महसूस किया, वह समझ गए कि अब मुहर्रम आ गया है और अब लोगों को कन्ट्रोल करना मुमकिन नही है। इस मनहूस हुकूमत की रिर्पोटों में यह साफ–साफ नज़र आता है कि मुहर्रम का महीना आ जाने के बाद वह अपने होश व हवास खो बैठे थे, उनके हाथ पैर फूल गए थे और हमारे लोगों को समझने वाले, दुनिया को जानने वाले, तेज़ देखने वाले, दूर की सोंचने वाले, और समझदार व अक़लमन्द रहनुमा इमामे खुमैनी रिज़वानुल्लाह तआला अलैह अच्छी तरह जानते थे कि इस हादसे से इमाम हुसैन (अ0) के मक़सद को आगे बढ़ाने के लिए कैसे फायदा उठाया जा सकता है और उन्होंने इससे फायदा उठाया भी। आपने मुहर्रम को तलवार पर खून की कामयाबी का महीना बताया और इसी नतीजे और समझ के साथ उन्होंने मुहर्रम के महीने की बरकत से खून को तलवार पर कामयाबी दिला भी दी। यह एक नमूना है जिसे आपने खुद ही अपनी आँखों से देखा है।

इस नेअमत से फायदा उठाना चाहिए, लोगों और ओलमा दोनों को। लोगों को इस तरह फायदा उठाना चाहिए कि मजालिसे अज़ा में दिल लगाएँ, उसका शौक़ पैदा करें, मजलिसें बरपा करें, जहाँ तक हो सके ज़ियादा से ज़ियादा अलग–अलग तरह से मजलिसें करें। इन मजलिसों में सच्चाई और मुहब्बत के साथ शरीक हों शिरकत भी फायदा उठाने की नियत से हो, वक़्त गुज़ारने की नियत से नहीं या आम तरह से आख़िरत के सवाब की नियत से, जबकि उन्हें मालूम ही नहीं कि इस सवाब का सरचश्मा क्या है? यक़ीनन इन मजलिसों में शिरकत का बड़ा सवाब है लेकिन यह सवाब कैसे मिलेगा? इसका सरचश्मा क्या है? क्यों मिलेगा? इसकी वजह क्या है? यक़ीनन इस सवाब की वजह एक ख़ास सिम्त है कि अगर इसकी रिआयत न की गई तो सवाब भी नही मिलेगा, कुछ लोग इस सिम्त से अन्जान है, लोग इन मजलिसों में शरीक हों, इसकी क़द्र जानें, इससे फायेदा उठाएँ और इसे कुर्आन, इस्लमी रूह, रसूल (स0) के ख़ानदान और हुसैन इब्ने अली (अ0) से दिली और रूही तअल्लुक़ बनाने का रास्ता समझें।

ओलमा की ज़िम्मेदारियाँ लोगों से ज़ियादा बड़ी हैं क्योंकि मजलिसें इस तरह बनती हैं कि कुछ लोग एक जगह पर इकटठा होते हैं और एक आलिमे दीन मिम्बर पर जाकर मजलिस पढ़ता है। अब आप ओलमा से यह सवाल है कि आप किस तरह मजलिस पढ़ेंगे? मेरा सवाल उन सारे ओलमा से है जो इस मसले में अपनी ज़िम्मेदारी का एहसास रखते हैं।

et kfy l av k§ p fj =&fuekZk

सफ़वतुल उलमा मौलाना सैय्यद क़ल्बे आबिद साहिब क़िब्ला ताबा सराह

अनुवादक – मु0 र0 आबिद साहिब

जगदीश अल्लाह ने मनुष्य की हिदायत (मार्ग–दर्शन) के लिए नबियों और रसूलों (ईश–सन्देशवाहक एवं ईश दूतों) का क्रम स्थापित किया, किताबें उतारी, शरीयतें (धर्मनिधियाँ) भेजीं जिनमें सबसे आखिर और सम्पूर्णतम शरीयत वह है जिसको सबसे आखिरी नबी हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा (स0) के द्वारा भेजा गया। काल और समय के अनुसार शरीयतें बदलती गयीं, दीन (धर्म) एक ही रहा जैसा कि (अल्लाह का) इरशाद (सूक्ति) है – ''इन्नद्दी–न इन्दल्लाहिल् इस्लाम'' (अल्लाह के नज़दीक दीन बस इस्लाम ही है) जनाब इब्राहीम (अ0) और जनाब याकूब (अ0) के सम्बन्ध में यह व्याख्या है कि आपने अपनी औलादों से यह वसीयत की कि तुम्हें इस्लाम पर मौत आए। तो पता चला कि रिसालत मॉब (हज़रत मुहम्मद स0) से पहले भी जिस धर्म का प्रचार किया जाता रहा है वह इस्लाम ही था। शरीयतों के बदलने का मतलब यह है कि समय के आवश्यक्तानुसार अमोंलिक आदेशों में परिवर्तन होते रहे। खुद शरियतों का बदलना इस बात का प्रमाण है कि जगदीश (खुदा) के आदेशों में ध्येय और उद्देश सापेक्ष होते हैं यदि ध्येय और उद्देशों के समक्ष शरीयत के आदेश न हों तो समय बदलने से हालात के बदलाव से शरीयत में परिवर्तन के कोई माने नहीं होते। खुद शरियतों का बदलना इस दृष्टिकोण को नकारता है जिसमें यह कहा जाता है कि खुदा के आदेश ध्येय और उद्देश्यों के सापेक्ष नही होते। वास्तव में कोई अच्छाई और कोई बुराई नही है जिसका लिहाज़ करके अल्लाह ने किसी बात का हुक्म दिया या मना किया हो बल्कि वही अच्छा है जो अल्लाह कह दे और वह बुरा है जिसकी अल्लाह मनाही कर दे। अगर वह झूठ को वाजिब (अनिवार्य) कर देता तो झूठ अच्छा होता अगर सच को मना कर देता तो सच बुरा होता। अर्थात अच्छाई और बुराई का आधार अल्लाह का हुक्म और उसकी मनाही है। इससे हटकर वस्तुतः न कोई चीज़ अच्छी है और न कोई चीज़ बुरी है लेकिन यदि यह दृष्टिकोण सही हो तो फिर खुद आदेशों का परिवर्तन का आधार क्या निश्चित होता है? परिस्थितियों और परिघटनाओं के बदलने से आदेशों में क्यों परिवर्तन किया गया। कुर्आन मजीद भी व्याख्या कर रहा है कि खुदा के आदेश निरूद्देश नहीं होते जैसा कि रोज़े के बारे में इरशाद है कि रोज़ा इसलिए फ़र्ज़ (धर्मबद्ध) किया गया ''ल–अल्ल–कुम तत्तकून'' (कि तुम में तक़वा अर्थात भगवान का भय पैदा हो जाए।) नमाज़ के लिए इरशाद है कि ''इन्नस्सला–त तन्हा अनिल् फह्शा–इ–वल्मुन्कर'' (नमाज़ हर प्रकार की खुली और छुपी बुराईयों से रोकती है) जमाअत की नमाज़ (सामूहिक नमाज़) का उद्देश एवं ध्येय यह बताया गया कि मुसलमानों में सामूहिकता (समाजिकता) पैदा हो। हज्ज का कारण यह बयान किया जाता है कि पूरा मुसलमान जगत एक केन्द्र पर एकत्रित हो। अहलेबैत में इमामों से भी बहुतात से ऐसी रिवायतें (वर्णित कथन) मिलती

हैं जिनमें शरियत के आदेशों (धर्मा–देश) के ध्येय व उद्देश को बयान किया गया है। निश्चय ही अल्लाह के आदेशों का पालन करने से आख़िरत का अज्र व सवाब (पुण्य) प्राप्त होगा लेकिन यह सवाब इताअत (आज्ञा–कारिता) का है। क्योंकि मोमिन (आस्तिक) बन्दे ने अल्लाह के आदेशों का पालन किया उसका सवाब आख़िरत (परलोक) में देगा जो विभिन्न इबादतों को लिए अलग–अलग निश्चित है लेकिन क़ुदरत (प्रभुत्व) की दृष्टि में इन आदेशों का उद्देश परलौकिक पुण्य नही वरन् उसने जो आदेश दिये हैं वह इंसान के भौतिक जीवन के लोभ हितों और भलाइयों का लिहाज़ (पास) रखते हुए दिये गए हैं।

अतः यदि यह कहा जाए कि कर्बला की घटनाओं और मजलिसों (शोक–सभाओं) से सबक़ लेकर इन्सान को अपनी ज़िन्दगी संवारना चाहिए, अपने आचरज–चरित्र ठीक करना चाहिए, कर्बला के अमर शहीदों के चरित्र को अपनाने की कोशिश करना चाहिए तो कोई नयी बात और नया विचार नहीं समझना चाहिए। अहलेबैत (अ0) की परम्पराएँ मौजूद हैं "मन जलिस मजलिसन युहया फीही ज़िक्रुन लम युमित क़ल्बिही यौम तमूत फीहील् कुलूब" (जो वयक्ति किसी ऐसी मजलिस, सभा में बैठे जिसमें हमारा तज़किरा हो तो उसका दिल उस दिन यानि क़यामत के दिन मुर्दा न होगा जब सब दिल मुर्दा होंगें)

जिन हदीसों (मासूमों से उद्धघृत सूक्तियों) में रोने के गुण बखान किए गए हैं उनको नकारा नहीं जा सकता है लेकिन सवाल यह है कि वह सभी पुण्य इमाम के आदेश पालन के परिणाम में मिलेंगे। मासूम (अ0) ने कर्बला की घटनाओं और इमाम हुसैन (अ0) की मुसीबतों के संस्मरण का हुक्म ही क्यों दिया है। जैसा कि पहले बयान किया जा चुका है कि शरियत के आदेश का उद्देश्य परलौकिक पुण्य नही हो सकता (क्योंकि यह आज्ञाकारिता का परिणामस्वरूप है) अब वह उद्देश क्या है जिसको दृष्टगोचर रखने के लिए यह आदेश दिये गए हैं?

ज़ाहिर है कि इसके अलावा क्या हो सकता है कि जब कर्बला की घटनाएँ हमारे सामने आती हैं तो उनसे हमें ऐसे सबक़ मिलते हैं जिनसे हम अपना जीवन संवार सकते हैं, अपने आचरण–चरित्र को उस सांचे में ढाल सकते हैं जो एक सच्चे मोमिन और मुसलमान का होना चाहिए। कभी–कभी यह कह दिया जाता है कि अहलेबैत (अ0) तो मासूम (अदग) थे, इमाम हुसैन (अ0) तो इमाम थे, हम मासूम या इमाम तो नही, उनका आचरण (अनुसरण) क्योंकर कर सकते हैं। किन्तु कुर्आन मजीद की व्याख्या है कि खुदा किसी के ऊपर उतना बोझ नहीं डालता जो उसके सहन से परे हो। यदि मासूम का अनुसरण ग़ैर मासूम (जो मासूम न हो) के लिए सम्भव न होता तो अल्लाह कभी सभी मुसलमानों को रसूल (स0) का अनुसरण करने का आदेश न देता फिर कर्बला के आइने में मासूम के चरित्र के अलावा ग़ैर मासूम व्यक्तियों के जीवन हमारे लिए मार्गदीप (मार्ग–दर्शक) बन कर आते हैं।

क्या किसी ने जनाब हबीब इब्ने (सुपुत्र) मज़ाहिर, जनाब मुस्लिम बिन (सुपुत्र) औसजा और जुहैर बिन क़ैन आदि के सम्बन्ध में इसमत (अदगता–निष्पापिता) का दावा किया है? इमाम हुसैन (अ0) के साथ आने वालों में सिर्फ हाशिमी व मुत्तलिबी (इमाम हुसैन अ0 के वंशज) ही नहीं सिर्फ क़ुरैश (रसूल स0 और स्वयं इमाम के गोत्र वाले) ही नहीं केवल अरब ही नहीं वरन् रोम व हबश (इथोपिया) के रहने वाले भी सम्मिलित थे।

लगभग हर आयु के जवान, बूढ़े और बच्चे मौजूद थे। मर्द भी थे औरतें भी थीं लेकिन उनमें से जिसको देखिये वह आचरज का एक अलौकिक और निरूपम आदर्श (Ideal/Model) बनाने के योग्य है। क्या उच्च और महत्व उद्देश के लिए बड़ी से बड़ी कुर्बानी (बलि) पेश करने की मिसाल कर्बला की घटना से बढ़कर मिलती है? क्या अल्लाह की इबादत (उपासना) को किसी भी दशा में न छोड़ने का नमूना यहाँ ये ज़ियादा अच्छा मिल सकता है? क्या आपस में भाईचारे, हमदर्दी (सौहार्द) और समता की भावना इस से अधिक परिपूर्ण ढूँढी जा सकती है? क्या सच्चाई पर जम जाने और सत्यता से बाल की नोक भर न हटने की मिसाल यहाँसे अच्छी कहीं पायी जा सकती है? क्या परहित, कुर्बानी के कर्बला से अच्छे नमूने कहीं मिलेंगे? क्या बड़ी से बड़ी मुसीबत के सहन और धैर्य व दृढ़ता में अन्तर न आने की कर्बला से बढ़कर कोई घटना प्रस्तुत की जा सकती है? क्या इमाम की आज्ञाकारिता और आदेश पालन को हर चीज़ पर वरियता देने की मिसाल यहाँसे बढ़कर कहीं मिल सकती है? बस कर्बला की एक तस्वीर (चित्र) है मगर हज़ारों रंग स्पष्ट हैं।

कर्बला एक फूल नहीं, एक गुलदस्ता (पुष्पान्जली) है, गुलदस्ता नहीं, एक चमन (वाटिका) जिसमें आचरण व चरित्र के रंगारंग फूलों के विभिन्न गुच्छे खिले हुए है और हर एक अपने रंग–सुगंध में बेजोड़ और बेमिसाल है। यह धारणा पूर्णतयः ग़लत है कि इमाम हुसैन (अ0) हमारे लिए नजात (मोक्ष) का वसीला (साधन) जैसे ईसाई जनाब ईसा (ईशु मसीह अ0) के सम्बन्ध में फिद्या (बदले की कुर्बानी) की धारणा रखते हैं यानि हम इमाम हुसैन (अ0) के प्रेम के दावे के बाद पूर्णतयः आज़ाद (निरंकुश) कर दिये गए हैं जो चाहें दुर्व्यवहार करे, दूसरों पर अत्याचार करें उसके अधिकार हड़प लें, इस्लामी आदेशों को पैरों से रौंदे लेकिन जन्नत का ठेका हमारे नाम लिख दिया गया हैं। निश्चय ही इमाम हुसैन (अ0) मोक्ष के माध्यम है, निश्चय ही इमाम हुसैन (अ0) उन्मुक्ति के साधन हैं, मगर किस तरह? उसी तरह जिस तरह हुर को जहन्नम से छुटकारा देकर जन्नत का पात्र बना दिया। अर्थात प्रेम का ज़बानी दावा न करो वरन् कर्म और आचरण से भी हुसैनीय बनने की कोशिश करो। इस समय हमारी सबसे बड़ी ख़राबी यह है कि हमने मजलिसों को सिर्फ़ रस्मी (परम्परागत) बना लिया है। हमारे बाप–दादा मजलिसें करते थे अतः हमें मजलिस करना है। जो हिस्सा दस बीस बरस पहले बटता था वही बटना है। अगर हिस्से में कमी आ गयी तो दुनिया को क्या मुँह दिखायेंगे? दोस्तो में नाक कट जायेगी। तो अब मजलिस क्या हुई? दोस्तों में नाक बचाने का माध्यम और मुँह दिखाने का साधन रह गयी है। सुबह से शाम तक एक के बाद एक मजलिस में शिरकत होती है, (सम्मिलित होते हैं) लेकिन न यह उद्देश लेकर जाते हैं कि कुछ पाना है और न कुछ शिक्षा लेकर उठते हैं। लेकिन वही लोग जो मातम करके निकल रहे हैं, जिन्होंने अपनी ज़बानों से अभी थोड़ी देर पहले इमाम हुसैन (अ0) और कर्बला के अमर शहीदों के पाक और पुण्य नाम लिये थे जब उनकी गलियों और कूचों में बातें सुनी जाती हैं तो शर्म और लज्जा से सर झुक जाता है। हमारी क़ौम (सम्प्रदाय) आचरण की दृष्टि से दिन प्रतिदिन गिरती चली जा रही है हालाँकि हुसैन (अ0) का ज़िक्र (स्मरण) सुनने में कोई कमी नही हुई है। मेरे विचार में सभी रोगों का एकमात्र निदान यह है कि ज़ाकिर हज़रात (प्रवचकगण) मजलिसों को

अहलेबैत (अ0) के चरित्र–आचरण की पाठशालाएँ बना दें और मजलिस में शरीक होने वाले भी सिर्फ सुनने, वाह–वाह, सुब्हानल्लाह के नारे लगाने और दूसरे कान से उड़ा देने के मन से नही, बल्कि हर मजलिस से कुछ न कुछ प्राप्त करके उठें। निश्चित ही हुसैन (अ0) की शहादत ने हमें संचार–प्रचार का एक उत्तम माध्यम दिया है जो किसी सम्प्रदाय को प्राप्त नहीं और वह हमारी मजलिसें हैं। बस आवश्यक्ता इतनी है कि इस माध्यम और साधन का सही उपयोग किया जाये। तलवार जितनी धार वाली और तेज़ होगी ग़लत उपयोगसे बुरे परिणाम निकलने की उतनी ही सम्भावना होगी। अब इस संचार माध्यम को भी ग़लत हाथों में जाने से बचाना चाहिए नहीं तो लाभप्रद परिणामों के बदले बुरे परिणाम प्राप्त होते चले जायेंगे।

'kcsv k'kjw

अल्लामा नज्म आफ़न्दी

चाँद कुमहलाया हुआ निकला शबे आशूर को
किस क़दर ग़म का अन्धेरा था शबे आशूर को

हो रही थीं तेज़ तलवारें नबी (स0) की आल पर
लरज़ा बर अन्दाम थी दुनिया शबे आशूर को

ज़िन्दगी की गोद में वो इज़्तेराबे कायनात
बन गई बे शीर का झूला शबे आशूर को

आह निकली सीन–ए–गेती से पहुँची ता फलक
तोड़ कर फितरत का सन्नाटा शबे आशूर को

कर्बला के दश्त में बेख़्वाब था जाने हिजाज़
सो रहे थे यसरिबो बतहा शबे आशूर को

मुत्तहिद था शुक्रे हक़ में सुब्ह करने के लिए
क़ाफ़िला दो रोज़ का प्यासा शबे आशूर को

थे तबस्सुम रेज़ अन्सारे हुसैन (अ0) इब्ने अली (अ0)
ज़िन्दगी दिलचस्प थी गोया शबे आशूर को

अल्ला अल्ला चाहते हैं तुझको अन्सारे हुसैन
ज़िन्दगी ने मौत से पूछा शबे आशूर को

ऐसे बेपरवा कि जैसे सर ही शानों पर नही
जंग पर जब फैसला ठहरा शबे आशूर को

कुछ सादाएँ आ रही थीं खेमा–ए–शब्बीर से
दर्द का तूफान था दरिया शबे आशूर को

शम्आ लेकर रुए अक्बर देखने बैठी थी माँ
सुब्हे महशर तक ठहरना था शबे आशूर को

जाने क्यों कर रह गए पर्दे में असरारे अज़ल
नंगे सर थीं फातिमा ज़हरा शबे आशूर को

नजमे गरदूँ सर बसिजदा है सितारे बे ज़बाँ
किस से पूछें तुम ने क्या देखा शबे आशूर को

bLyke ft Unk gksx;k cl dcZ ykdscku

मौलाना सैय्यद क़ल्बे जवाद नक़वी साहिब क़िब्ला

अनुवादक – अता इमाम ज़ैदपुरी

जब से मानवता की इमारत की नींव पड़ी और मनुष्यों के पितामह् (जनाब आदम) ने पृथ्वी पर पदार्पण किया (क़दम रखे) तो शैतानियत (दानवता) ने भी पृथ्वी पर अपने जाल बिछाना शुरु कर दिया था जिसमें दुर्बल चरित्र के मानव फंस गए और शैतान के प्रतिनिधि बन कर सत्य (हक़) के प्रतिनिधियों के मुक़ाबले पर आते रहे, बल्कि उनका खून नाहक़ (अनर्थ) बहाने से भी संकोच नही किया और मानवता के आस्तित्व के लिए शैतानियत (दानवता) के मुक़ाबले में सत्य के पुजारियों (भक्तों) को हमेशा अपने खून की बलि (परित्याग) देना पड़ीं। इस क्रम में पहली बलि (परित्याग) जनाब आदम (अ0) ने दी जिन्होंने अपने खून का बलिदान, जनाबे हाबील (अ0) के रूप में दिया और जनाबे हाबील (अ0) ने भी चरित्र का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण इस तरह प्रस्तुत किया कि जब क़ाबील ख़ून बहाने पर तैयार थे तब भी हाबील (अ0) की ज़बान पर यही शब्द थे कि भाई चाहे तुम मुझे क़त्ल भी कर डालो मगर मैं तुम पर हाथ न उठाऊँगा क्योंकि तुम मेरे भाई हो।

धर्म–प्रचार के रास्ते में जब जनाबे नूह (अ0) ने अपने खून का बलिदान इस प्रकार दिया कि उपदेश के जवाब में जब लोग पत्थर मारते थे और जनाबे नूह (अ0) का शरीर घावों से लहू लुहान हो जाता था लेकिन जनाब नूह (अ0) शैतानों को मानवता की शिक्षा देने से कभी पीछे न हटे। असत्य (बातिल) के मुक़ाबले में सत्य के प्रतिनिधि जनाबे इब्राहीम (अ0) को भी महान बलिदान प्रस्तुत करना पड़ा इसी तरह जनाबे यह्या (अ0) और जनाबे ज़करिया (अ0) की भी खून छिड़की (रक्त–रंजित) कथाएँ इतिहास से छुपी नही हैं यहाँ तक कि इन क़ुर्बानियों का यह क्रम आख़री नबी हज़रत मुहम्मद (स0) तक पहुँचता है और एलान होता है कि इसके बाद कोई नबी नही आएगा तो शैतानी मशीनरी (दानवता) पूरे बल से गति में आजाती है और रसूल (स0) को कहना पड़ता है कि ''जितना कष्ट मुझे दिया गया उतना किसी नबी को नही दिया गया।'' कभी मानवता के सुधारक और इस्लाम के पैग़ाम्बर (सन्देश–वाहक) के रास्ते में काँटे बिछाए गए तो तलवे खून से भर गए, कभी इतने पत्थर मारे गए कि मुख खून से नहा गया कोई मदद करने वाला नही था, सिवाय एक कमसिन चचेरा भाई अली (अ0) के जो हर समय सीना सिपर रहा। जिन्होंने कभी मक्के में बच्चों के पत्थरों से बचाया कभी हिजरत की रात रसूल (स0) के बिस्तर पर सोकर रक्षा की, कभी बद्र में रिसालत के बद्रे कामिल (सम्पूर्ण चन्द्र) का हाला और कभी ओहद में मोहम्मदी शमा का परवाना बने।

इस्लाम के रसूल (स0) ने मानवता के सुधार के लिए किसी भी तरह की बलि से संकोच नहीं किया यहाँ तक कि जनाबे ख़दीजा की सम्पत्ति का एक पैसा भी अपनी औलाद के लिए

बाक़ी न छोड़ा। पूरा अरब अधिपत्व में आ गया लेकिन दीन व दुनिया के सम्राट को अपने पेट पर पत्थर तक बाँधे देखा गया। यही परित्याग व बलिदान की भावना खून बनकर अली (अ0) की रगों में दौड़ रही थी और रसूल (स0) कह भी चुके थे कि ''ए अली तुम्हारा माँस मेरा माँस और तुम्हारा खून मेरा खून है।'' बलिदान का अभिप्राय दूसरे की जान (परहित) को अपनी जान (अपने हित) से ऊपर रखना है, अपनी आवश्क्ता पर दूसरे की आवश्क्ता को वरियता देना और ज़रूरत पड़ने पर अपनी प्रियतम वस्तुओं को दूसरी किसी महत्पूर्ण वस्तु के लिए परित्याग देना। अमीरुल मोमिनीन हज़रत अली (अ0) का पूरा जीवन इस तरह की कुर्बानियों से भरा हुआ है। कुर्बानी उस समय वास्ततिक अर्थों में कुर्बानी होगी जब कुर्बान की जाने वाली वस्तु या तो प्रिय हो या उसकी बहुत अवश्यक्ता हो। इसीलिए कुर्आन मजीद में है कि ''तुम हरगिज़ नेकी (पुण्य) तक नही पहुँच सकते जब तक वह वस्तु खुदा की राह में न दो जिससे तुम मुहब्बत करते हो'' जितनी अधिक मुहब्बत और चाहत की हद ऊँची होगी उतना अधिक कुर्बानी का मर्तबा (स्तर) ऊँचा होगा। अपनी जान से अधिक और क्या चीज़ हो सकती है? लेकिन अमीरुलमोमिनीन (अ0) इस शान से अपनी जान को खुदा की राह में प्रस्तुत करते हैं कि पालने वाले (खुदा) की मर्ज़ी के मालिक बन जाते हैं इससे यह भी नतीजा निकलता है कि बलिदान (कुर्बानी) कभी बेकार नही जाता अन्त में इस्लामी शिक्षा का प्रचार और अपने उच्च आदर्शों के लिए अली (अ0) को अपनी जान की बलि देना पड़ती है और कूफ़े की मस्जिद की मेहराब अली (अ0) के खून से लाल हो जाती है।

हज़रत अली (अ0) के उत्तराधिकारी इमामे हसन (अ0) का जीवन भी परित्याग व कुर्बानी का उत्तम उदाहरण है। यहाँ तक कि राज–सिंहासन की कुर्बानी दे दी ताकि सत्य के प्रतिनिधियों पर सत्ता–भोग का इल्ज़ाम न लगे लेकिन इस पर भी असत्य (बातिल) के प्रतिनिधि और शैतान के पुजारी सन्तुष्ट नही हुए और अन्त में इमामे हसन (अ0) थे, हलाहल विष था, खून की कुल्लियाँ थीं और लगन में जिगर के टुक्ड़े थे।

अब हक़ (सत्य) के प्रतिनिधि इमामे हुसैन (अ0) थे और बातिल (असत्य) का प्रतिनिधित्व यज़ीद कर रहा था। हक़ के प्रतिनिधि से बैयत की माँग की गयी। भला इमामे हुसैन (अ0) एक भ्रष्ट, पापी और मानवता के नाम पर कलंक की बैयत कर लेते? अब इमामे हुसैन (अ0) के लिए मौक़ा था कि संसार को बता दें कि धर्म क्या है? और अधर्म क्या है? मानवता क्या है? और हैवान होना क्या है? मुल्क जीतना क्या है? और दिलों को जीत लेना क्या है? इमाम हुसैन को ज्ञात था कि मानवता को बाक़ी रखने के लिए और इस्लाम की रक्षा के लिए महान बलिदान (कुर्बानी) देना होगी और इसके लिए वह तैयार होकर उठे थे और वह क्या है कि जिसकी इमामे हुसैन (अ0) ने कुर्बानी नही दी यह इमाम हुसैन (अ0) की कुर्बानियों की विशेषता थी कि उनकी कोई सम्पूर्ण सूची तैयार नही कर सकता जितनी भी गहन दृष्टि से सूची क्यों न बनायी जाए वह अपूर्ण ही रहेगी। आदिकाल से सत्य के रास्ते में कुर्बानी प्रस्तुत की जाती रही है और सत्य असत्य के बीच टकराव नामों की भिन्नता के साथ सदा से चल रहा है, मगर इमामे हुसैन (अ0) का यह इमतियाज़ हमेशा बाक़ी रहेगा कि दूसरे उदाहरणों में आप ये बता सकते हैं कि क्या–क्या कुर्बान किया गया मगर इमाम हुसैन (अ0) के विषय में तो यह ढूँढना है

कि क्या कुर्बान नहीं किया गया। वतन छोड़ा, नाना के मज़ार को छोड़ा, माँ और भाई की लहद छोड़ी, हज्ज को अधूरा छोड़ना पड़ा, तेज़ गर्मी और धूप में छोटे–छोटे बच्चों के साथ सफ़र की कठिनाई उठायी, किन्तु मानवता के उच्च मूल्यों को न छोड़ा, हुर्र की सेना खून की प्यासी थी लेकिन आपने साथ का सारा पानी पिलाकर सिसक्ती हुई मानवता को फिर से जीवन दिया।

क्या बताएँ कि इस्लाम के पैधे की सिंचाई के लिए और दम तोड़ती मानवता को नया जीवन देने के लिए इमाम हुसैन (अ0) ने किस–किस का खून दिया। साथियों का खून, अज़ीज़ों (प्रियजनों) का खून, कड़ियल जवान बेटे का खून, बराबर के भाई अब्बास अलमदार (ध्वजवाहक) का खून और एक खून इस भूमि पर ऐसा बहा जिसकी मिसाल इतिहास में कभी न दिखी वह छः माह के बच्चे अली असग़र का नाहक़ खून, मगर नहीं, खून भूमि पर नहीं बहा इसे तो इमामे हुसैन (अ0) ने अपने चेहरे पर मल लिया जैसे ये शहादत के चेहरे का उबटन (सौन्दर्य) था।

स्वयं रसूल (स0) के आत्मज का खून इस भूमि पर विभिन्न प्रकार से बहा, सीने का खून, गोद का खून, चेहरे का खून, माथे का खून और अन्त में पुनीत हृदय का खून जिसके बाद इमामे हुसैन (अ0) में सम्भलने की शक्ति न रही।

लगभग तेरह सौ वर्ष पहले इस्लाम के रसूल (स0) के इस पुत्र ने अक़्लों को दंग कर देने वाली वह कुर्बानी दी जिसके भूचाल–तोड़ (आश्चर्यजनक) दृश्य मनुष्य की सहनशीलता से परे, धैर्य और इतमिनान, बेमिसाल दीनदारी (धार्मिक्ता), हिम्मत–तोड़ मुसीबतें, बेजोड़ खुदा शनासी (ईश्वर बोध) और धार्मिक बलिहारी ने मानवता जगत, देवलोक और नबियों व रसूलों के समस्त समुदाय को आश्चर्यचकित कर दिया था। कर्बला में सब लोग मासूम (निष्पापी) न थे। सिर्फ इमाम हुसैन (अ0) या चौथे इमाम व पाँचवे इमाम वह थे जो निश्चत ही इस्मत (निष्पापिता) के वस्त्र धारक थे। बनी हाशिम (हाशिम के वंशज) के लिए कहा जा सकता है कि इस्मत की गोद में पले थे मगर साथियों को देखें तो सिर्फ शिया और अहले बैत से मुहब्बत करने वाले (प्रेम व निष्ठा रखने वाले) थे मगर उन्होंने भी परित्याग और बलिदानों (कुर्बानी) के ऐसे अद्वितीय चित्र प्रस्तुत किये कि इमामे हुसैन (अ0) को कहना पड़ा कि मुझसे अधिक वफादार (निष्ठावान) साथी किसी को नहीं मिले और इमामे अस्र (समय के इमाम अ0) फ़रमाते हैं कि ऐ हुसैन के साथियों तुम पर मेरे माँ–बाप निछावर हो जाएँ।

निश्चय ही रसूल (स0) और अमीरुलमोमिनीन को सलमान, अबूज़र, मीसम व मालिके अशतर जैसे सहाबी मिले मगर कोई ईमान के दस अंश (स्तर) पर तो कोई नौ पर कोई आठ पर आर्थात एक रूप व एक चमक–दमक के मोती न थे मगर कर्बला में ऐसा दर्पणशाला थी जिसमें बहत्तर दर्पणों में केवल एक चित्र था और वह था इमामे हुसैन (अ0) का आध्यात्मिक रूह के हकीम (नीतिज्ञ) इमाम हुसैन (अ0) की दृष्टियाँ देख रही थी कि इस्लाम एक ऐसे रोगी की तरह है जिस का दम होंटो पर हो और जिसकी रगों में प्रदूषित खून दौड़ रहा था। ऐसा मरीज़ दो तरह से ठीक हो सकता था, या इस के खून को साफ़ कर दिया जाए या नया खून दिया जाए। हज़रत अली (अ0), इमामे हसन (अ0) और आरम्भ में इमामे हुसैन (अ0) का भी यही प्रयत्न रहा कि इस खून का ही शुद्धीकरण हो जाए, लेकिन जब यह

शुद्धीकरण सम्भव न रहा तो इमामे हुसैन (अ0) ने निर्णय कर लिया कि इस्लाम को जीवित रखने के लिए इसकी रगों में नया खून दौड़ाना (प्रवाहित करना) होगा। मरीज़ को वही खून चढ़ाया जा सकता है जिसका ब्लड–ग्रुप एक हो, कुछ मरीज़ों का ब्लड–ग्रुप दुर्लभ होता है तो इमामे हुसैन (अ0) ने पूरे इस्लाम जगत पर नज़र डाली तो लाखों में केवल बहत्तर निकले। इसीलिए रास्ते में साथ आये लोगों को हटाते गये, केवल उनको साथ रखा जिनकी रगों में इस्लामी शिक्षाएँ खून बन कर दौड़ रही थी और उन्हीं का खून इस्लाम को अमर जीवन प्रदान कर सकता था। अगर इमामे हुसैन (अ0) इस्लाम के मुर्दा होते हुए शरीर में अपना खून न देते तो देखने में तो इस्लाम होता मगर इस्लाम की आत्मा न होती अर्थात वह इस्लाम रह जाता जिसमें नमाज़ तो होती मगर अपनी बनायी हुयी, रोज़ा तो होता मगर अपने पसन्द की हदों के अन्दर, खुम्स तो होता मगर पन्जतन से अलग हटकर, हज होता मगर व्यापार के लिए, जिहाद होता मगर दुनिया के पाने के लिए, मुहम्मद (स0) का हलाल (वैध्य) किया हराम (निषिध) होता और मुहम्मद (स0) का हराम किया हुआ हलाल और इस्लाम का वही रूप हो जैसा इस्लाम के शत्रु चाहते थे।

vtk, gqlS ¼v0½

देबले हिन्द हज़रत ज़ाख़िर इजतिहादी

कब है गमे हुसैन से बढ़कर अज़ा कोई
हर दिल का दर्द बन के जहाँ से उठा कोई

क्यों वक़्ते अस्र नहर के पानी को जोश है
कहता है अपनी प्यास का क्या माजरा कोई

आशूर को सहर से बहत्तर गले कटे
सुनते हैं वक़्ते अस्र लुटी कर्बला कोई

बरछी के फल से नज़्अ में ईज़ा है इस क़दर
मरने की माँगता है तड़प कर दुआ कोई

ए शिम्र शाह ज़िब्ह हुए घर न अब जला
ज़ालिम तेरी जफाओं की है इन्तिहा कोई

रन में रसूल ज़ादियों को यूँ न कर असीर
सर नंगे अहले बैत हैं दे दे रिदा कोई

पामाल लाश हो गई काटा गया गला
बाक़ी रही न सिब्ते नबी पर जफा कोई

दफ़्न ए गरोहे शाम मुसाफिर को करते जाओ
गुरबत में हो गया है शहीदे जफा कोई

ज़ाख़िर लहद में कह दे मलक पूछते हैं गर
उसके सिवा नहीं है हमारा ख़ुदा कोई

v t knkj kusbe kesgqS v y fgLl yke!

मौलाना हसन ज़फ़र नक़वी इजतेहादी साहिब (कराची)

अनुवादक – मौलाना ख़ुर्शीद अली रिज़वी साहिब

आप ही वह हुसैनी लश्कर हैं जो शीईयत को अल्लाह के इनाम के रूप में मिला है। यूँ तो सारी मिल्लते जाफरिया ही इस उनवान की मिस्दाक़ है मगर इस ज़माने में अज़ादारी अपनी बढ़ती हुई मन्ज़िलें तय करती हुई उस जगह पहुँच चुकी है कि अब पूरी तरह इसमें शोबे बन चुके हैं। ओलमा, ख़तीब, ज़ाकेरीन, मर्सिया पढ़ने वाले, मज्लिसों के बानी, मातमी अन्जुमनें, स्काउट के दस्ते और इसके अलावा भी बहुत से हिस्से।

हमें पूरा यक़ीन है कि हम ही वह अज़ादाराने हुसैनी हैं जो हुसैन (अ0) की माँ की दुआ का हासिल हैं इसलिए हमें जब तक जीना है हुसैन (अ0) के ग़म के साथ जीना है।

लेकिन यहाँ एक सवाल पैदा होता है कि सिर्फ मज्लिसे अज़ा कर लेने से हम सबकी ज़िम्मेदारी पूरी हो जाती है? इस अज़ादारी को ले लीजिये कुछ जगहों पर बल्कि हर जगह झगड़ा इस बात पर है कि एक ख़ास जमात चाहती है कि अज़ादारी रुक जाए। इस मसअले पर बात आगे बढ़ती है, झगड़े की नौबत आ जाती है। कितने ही अज़ादार जामे शहादत पी चुके हैं, कितने ही अज़ादारी के लिए ज़ंजीरों में जकड़े जा चुके हैं। क्या उन शहीदों के वारिसों की ज़िम्मेदारी और क़ैदियों के मसाएल हल करना हमारी ज़िम्मेदारी नही है, क्या उस खास, तैयार शैतानी जमात के ख़िलाफ क़ौम को तैयार करना हमारी ज़िम्मेदारी नही है?

लेकिन अजीब बात यह है कि हमारी ही सफों में यह आवाज़ें उठने लगती है कि यह सियासत है और हमारा सियासत से कोई तअल्लुक़ नही है। अगर यह सियासत है और हमारा सियासत से कोई तअल्लुक़ नही है तो यह मसाएल कौन हल करेगा? कैसे हल करेगा? यह मसाएल आपको और हम सबको मिल कर ही हल करने हैं।

बताइये क्या यह अज़ादारी खुद एक एहतेजाज नही है। क्या यह जुलूसे अज़ा एहतेजाजी जुलूस नही है। हम तो पैदा ही जुल्म के ख़िलाफ एहतेजाज करने के लिए हुए हैं लेकिन एक बनाये हुए तरीक़े से अज़ादारी को सिर्फ एक रस्मी कारवायी तक घेरे रखने की साज़िश पर अमल हो रहा है और इस इबादत को रस्मी कारवायी में बदला जा रहा है।

अज़ादार जो पैदाईशी तौर पर एक इन्क़िलाबी होता है धीरे–धीरे उसे शक्की बनाया जा रहा है। अज़ा ख़ाने जो इन्क़िलाब का मरकज़ हैं कुछ लोगों की जागीरें बनते जा रहे हैं। अपनी–अपनी जगहों पर भीड़ जमा करने के लिए तरह–तरह की चालें चली जा रही हैं और बाअमल आलिमों, ज़िम्मेदार ख़तीबों और ज़िक्र करने वालों के बजाय ऐसे लोगों को दावत दी जाती है जो न सिर्फ यह कि इल्मी तौर पर कमज़ोर होते हैं बल्कि अपनी कमज़ोरियों पर पर्दा डालने के लिए अज़ादारों और अज़ादारी के साथ खेल खेलते हैं।

अफसोस वाली बात यह है कि अगर कोई

ऐसे धोका देने वाले लोगों के धोके को सामने लाना चाहता है तो फौरन उसे शीआियत से निकालने और अज़ादारी के दुश्मन होने का सार्टिफिकेट दे दिया जाता है। हमारी मिल्लत को इतने तजुर्बों से गुज़रने के बाद इतना सादा नही होना चाहिए कि हर फायदा उठाने वाला, अहले बैत से मुहब्बत की आड़ में उसे अपने मक़ासिद पूरे करने के लिए बेवक़ूफ़ बना दे।

यह एक ऐसी बात है जिस पर मुझे बड़ी एहतियात से क़लम उठाना पड़ रहा है क्योंकि मैं जानता हूँ कुछ लोग इस तहरीर को सिर्फ इसलिए पढ़ेंगे कि इसमें कोई एक आधा ऐसा जुमला उन्हें मिल जाए जिसे वह ले उड़ें और लोगों के बीच उसे फैला कर मुझे अज़ादारी का मुख़ालिफ़ और न जाने क्या–क्या मशहूर करा दें।

ऐ अज़ादाराने हुसैन (अ0)! आप ऐसे दीन और ईमान बेचने वालों से हर वक़्त होशियार रहें जो आपके सामने बड़े अज़ादार और अहले बैत (अ0) के बड़े चाहने वालों का रूप धारकर आते हैं और दीन व मिल्लत की पीठ में छुरा घोंपते हैं। उनकी हरकतें क़ुरैश के काफिरों के उन सरदारों से मिलती जुलती हैं जो खुदा के घर में बैठकर लोगों को खुदा से गुमराह करते थे।

उनकी एक निशानी यह है कि यह हर वक़्त झगड़ा फैलाने पर उतारु रहते हैं। इख़्तेलाफात को हवा देना, ग़लत फहमियाँ पैदा करना, लोगों को शक में डालना, शक वाली चीज़ों को खुली चीज़ों से रद करना, अल्लाह के हुक्मों का मज़ाक़ उड़ाना, बेअमली का शौक़ दिलाना, वाजिबात के ख़िलाफ दलीलें देना, ओलमा को तनक़ीद का निशाना बनाना, ईरानी एजेण्ट का लेबल लगाना, दीन के फैलाने वालों को कमतर समझना, दीन की सही बातों का इन्कार करना यह सब उसके पसन्दीदा काम हैं। यह बात–बात में क़ुरैश के काफिरों का यह जुमला दोहराते हैं कि हम तो पहली बार देख रहे हैं या पहली बार सुन रहे हैं हमारे बाप–दादा ने तो यह नहीं किया था। अज़ीज़ो! यह दीन का मसला है हमें क़दम–क़दम पर मुहम्मद (स0) और आले मुहम्मद (अ0) की शरीयत की पासदारी करना है। और हमारा मक़सद हर इबादत से खुदा और अहले बैत (अ0) की खुशी होना चाहिए न कि लोगों की।

ऐ आशिक़ाने हुसैन (अ0)! ज़रा ठण्डे दिल से ग़ौर कीजिये कि दीन किसी के बाप–दादा की सुन्नत का नाम है या खुदा के रसूल (स0) और पाक इमामों की तालीमात का नाम है? दीन को खुदा, रसूल (स0) और मासूम इमामों की तालीमात के साये में परखा जाएगा न किसी के बाप–दादा के अमल की रौशनी में और फिर बाप–दादा पर भी तो झूठा इल्ज़ाम है। क्या हमारे और आपके बाप–दादा यही काम अन्जाम दिया करते थे।

आप आज ही के दौर को देख लीजिये कि कितनी चीज़ें अभी कुछ सालों की पैदावार हैं जिनका हमारे बाप–दादा के अमल से कोई तअल्लुक़ नही है। मैं छोटी–छोटी बातों में पड़ना नही चाहता आप खुद अज़ा के दिनों में देखते हैं कि अज़ादारी को अपने ज़ाती और जमाअती मक़सदों के लिए किस बेदर्दी से इस्तेअमाल किया जाता है। क्या मिम्बर से लेकर मातमी दस्तों तक मुक़ाबले बाज़ी नही है और इस मुक़ाबले बाज़ी में हम हद से कितना आगे निकल जाते हैं। आप ज़रा सा ध्यान देंगे तो मेरी बात की हक़ीक़त साबित हो जायेगी।

मेरी बातों का बुरा मत मानिये। मैं आप ही का एक साथी हूँ और जो कुछ कह रहा हूँ वह एक दर्द वाले दिल की पुकार है। यह तहरीर

किसी शख़्स या जमाअत की हिमायत या मुख़ालफ़त या दिल दुखाने के लिए नही लिख रहा हूँ बल्कि खुद अपना जायज़ा लेने के लिए और आपका ध्यान अपनी–अपनी तरफ दिलाने के लिए लिख रहा हूँ। अपनी आने वाली नस्लों के इस सवाल के जवाब में लिख रहा हूँ जो कल सवाल करेंगे कि जब दीन में बदलाव का बाज़ार गर्म हो रहा था तो सब खामोश क्यों थे? इसलिए मैं हक़ बात कह कर मुँह और कानों पर खामोशी सजाए रखने के इल्ज़ाम को हटा रहा हूँ।

यहाँ लोगों का नाम लिए बिना एक क़िस्सा नक़्ल करना ज़रूरी समझता हूँ कि कुछ दिनों पहले की बात है कि एक जगह ओलमा और मातमी अन्जुमनों के कुछ नुमाइन्दे इकटठा हुए। वहाँ एक मशहूर अहले मिम्बर ने मातमी अन्जुमनों पर निशाने लगाना शुरु कर दिये और ज़ोर इस बात पर था कि इस ज़माने में मातमी अन्जुमनें बुरे रास्तों की शिकार हैं। इस पर वहाँ मौजूद मातमी अन्जुमनों के नुमाइन्दे ने एक ठोस जवाब दिया कि जनाब हमारा काम है फर्शे अज़ा बिछाना हम अज़ादारी के लिए ख़र्च करते हैं और पढ़ने वाले के मुँह माँगे दाम देते हैं अब आप का काम है कि आप मिम्बर से क्या देते हैं।

हक़ीक़त में सबसे बड़ी ज़िम्मेदारी मिम्बर वालों की है कि वह मिम्बर से ख़ास तौर पर जवानों के सुधार का काम अन्जाम दें। क्या वजह है कि मजलिस के बीच जवानों का एक बड़ा हिस्सा इमाम बारगाह से बाहर होता है और सिर्फ मसाऐब के बाद मजलिस में आता है? वजह यही है कि उन्हें मजलिस में कोई नई बात मालूम होने की उम्मीद नही है, या कोई दिलचस्पी नही है और कभी हालत इसके बिलकुल उलट होती है कुछ मजलिसों में बात तो कोई नई नही है मगर पढ़ने वाले का अन्दाज़ ऐसा है कि वह अपने फन को दिखाकर हज़ारों की भीड़ को उठाता बैठाता है। बहुत ही माफी अगर मेरा जुमला बुरा लगा हो लेकिन मैं ऐसे कई लोगों को जानता हूँ जो सिर्फ इसलिए मज़हब को बदल कर बयान कर रहे हैं कि इसमें मेहनत कम और आमदनी ज़ियादा है और यह तबसरे भी खुलेआम करते हैं कि इस क़ौम को बेवक़ूफ बनाना सबसे ज़ियादा आसान है। इन लोगों ने कोई ठोस काम करने के बजाय आम मोमिनों को ख़यालात में उलझा दिया है और मिम्बर को नफरतें फैलाने का रास्ता बना दिया है।

आज वह मिम्बर जो अहले बैत के मक़सद को फैलाने का सबसे बड़ा रास्ता है इसी से शीआीयत की बुनियादें हिलाने की कोशिश की जा रही है, इस सामराजी साज़िश पर अमल किया जा रहा है कि इनके मिम्बर वालों को खरीद लो, ओलमा और मिल्लत के बीच दरारें डाल दो, गुमनाम और जाहिल लिखने वालों से बुनियादी अक़ीदों के खिलाफ लिखवाओ, शीआीयत की ताक़त के सबसे बड़े सरचश्मे मरजेइयत पर गहरी चोट मारों और शीआीयत को तबाह कर दो और अगर यह पूरी तरह तबाह न भी हो सके तो इसे सिर्फ रस्मो रिवाज तक ही घेर दो।

सदियों से सामराज और सामराजी गुमाशेते मरजेइत की ताक़त के आगे बेबस रहे हैं। आयतुल्लाह शीराज़ी की तम्बाकू हराम होने से लेकर इस्लामी इन्क़िलाब के बरपा होने तक दुनिया गवाह है कि शीआ कितना ही बेअमल क्यों न हो लेकिन जब भी मरजेइत, इस्लाम और शीआीयत के बचाने के लिए मैदान में आई पूरी मिल्लत जुग़राफियाई सरहदों का लिहाज़ किए बिना मराजेअः इज़ाम की हिमायत में आ गई और

हर मोड़ पर सामराजी इरादों को नाकाम बना दिया।

आप अज़ादाराने हुसैन (अ0)! कर्बला की आवाज़े ''हल मिन नासेरिन यन्सुरना'' का जवाब हैं। आप आज के ज़माने में अज़ादारी कि ज़रिए से हुसैन (अ0) की मदद में लगे हैं। एक हक़ीक़ी, हुसैन (अ0) की मदद करने वाले को यज़ीदी साज़िशों पर नज़र रखनी चाहिए। दुश्मन जानता है कि वह सामने आकर आपको हरा नही सकता, इसी लिए उसने मुनाफ़िक़त का चोला ओढ़ लिया है और दीन व ईमान बेचने वाले लोगों के रास्ते से मरजेइयत के मक़ाम को चोट पहुँचा रहा है।

आप खुद साचिये कि ग़ैबते कुबरा के ज़माने में अगर हम इस एक वहदत के मरकज़ से भी हाथ धो बैठे तो फिर हमारा क्या होगा? ग़ैबत के ज़माने में कौन हमको रास्ता दिखायेगा? बेशक हमारा इमाम (अ0) हमारा हक़ीक़ी ज़िम्मेदार और रास्ता दिखाने वाला है लेकिन हम लोग वसीले के क़ायल हैं क्या किसी भी ज़माने में ऐसा हुआ या हो सकता है कि इमाम (अ0) एक–एक शख़्स को रास्ता दिखाएँ? यक़ीनन बड़े मराजेअः वह वसीला हैं जिनके ज़रिए से इमामों के अहकाम तक हम पहुँच सकते हैं।

इसतेमारी ताक़तें करोड़ों डालर ख़र्च कर रही हैं ताकि हमारी सफों को तोड़ने की हवा दी जा सके, हम बराबर छोटे–छोटे गिरोहों में बंटते चले जाएँ और फिर नाम निहाद जिहादी ताक़तों से हमारी हर आबादी को बंजर बना दिया जाए।

हुसैनी सिपाही को अपने बचाव की तरफ से इतना अन्जान नही होना चाहिए। अब जब कि हम चारो तरफ से ख़तरों में घिर चुके हैं, दुश्मन अन्दरूनी और बाहरी दोनों तरफ से बराबर हमें नुक़सान पहुँचा रहा है हमें दोस्त और दुश्मन को पहचानना पड़ेगा, हमें अपनी सफों में छुपी हुई काली भेड़ों का रास्ता रोकना पड़ेगा।

सबसे ख़तरनाक चाल जो यह मुनाफ़िक़ इस्तेअमाल करते हैं वह लोगों के जज़्बात को भड़काना है। यह जानते हैं कि अज़ादारी और मौला के नाम पर हम जब चाहेंगे, जैसे चाहेंगे अज़ादारों को इस्तेअमाल कर जायेंगे और यह कर रहे हैं कि अज़ादारी में अपनी मर्ज़ी की रोज़ नई और जाहिलाना बातों को मिलाकर दूसरों को यह कहने का मौक़ा दे देते हैं कि यह अक़्ल, होश और समझ से ख़ाली वहम के पीछे भागने वालों की जमाअत है जिसका अक़्ल और समझ से दूर का भी वास्ता नही है।

मगर ऐ मातमी जवानों! यह कब तक होता रहेगा? क्या आप सोंचते समझते नही है कि जो लोग इस तरह की चालें चलते हैं वह खुद किस चीज़ के मालिक हैं, खुद उनकी बातों और कामों में कितना टकराव है। इन काली भेड़ों को एक बड़ा फायेदा (Advantage) वह कुछ मुल्ला पहुँचाते हैं जो दीन के लिबास में दीन का सौदा करते हैं, यह मुनाफिक़ उन्ही मुल्लाओं के किरदार को लोगों के सामने लाकर मिल्लत को ओलमा से गुमराह कर देते हैं।

यह इस्लाम को न जानने वाली मुल्लाइयत इस्लाम के लिए ख़ास तौर से शीअियत के लिए एक बहुत बड़ी मुसीबत है। मुझे यक़ीन है कि मेरे मातमी जवान मेरी बातों को उसी सच्ची नज़र से देखेंगे जिस सच्चाई के साथ मैं खुदा को गवाह करके यह लिख रहा हूँ।

कुर्आन और इमामे मज़लूम (अ0) का मरसिया

जनाब मोहम्मद सादिक़ साहिब
अनुवादक – जर्रार रिज़ा नक़वी

मुहर्रम का चाँद निकलते ही फसले अज़ाए हुसैन की शुरुआत हो जाती है, यह सिलसिला सन् 61 हिजरी में ही इमामे हुसैन (अ0) की शहादत के बाद से ही शुरु हो गया था जब यज़ीद के दरवाद में जनाबे इमामे हुसैन (अ0) की बहन जनाबे ज़ैनब ने पहली सफे अज़ा बिछाकर अपने भाई की शहादत पर गिरया व नौहा ख़्वानी की थी। तक से यह सिलसिला यूँ ही चला आ रहा है वैसे तो शहादते इमामे हुसैन (अ0) के बहुत पहले ही शहादते इमामे हुसैन (अ0) का ज़िक्र न सिर्फ कुर्आन में आया है बल्कि स्वयं रसूल (स0) ने इमामे हुसैन (अ0) की सफे अज़ा बरपा की थी जो एक तारीख़ी सुबूत है।

हम यहाँ पर कुर्आन की कुछ आयतें पेश करते हैं जिसमें इमाम मज़लूम का मरसिया मितला है।

पहली आयत में इमाम हुसैन (अ0) की पैदाईश के बारे में है, इरशाद होता है : ''ववस्सैइनल इन्साना बिवालिदैइही इह्साना, हमलत्हू उम्मुहू कुरहन ववज़अतुहू कुरहा''(सूर–ए–अहक़ाफ़, आयत 5)

और हम ने इन्सान को अपने माँ–बाप के साथ भलाई करने का हुक्म दिया क्योंकि उसकी माँ ने रंज की हालत में उसको पेट में रखा और रंज से ही उसे जना।

बिहारुल अनवार में पक्की सनद के साथ रिवायत हुई है कि जब हुसैन (अ0) सा पाक नूर फातिमा (अ0) के पेट में आया, जिबरील नाज़िल हुए और यह कहा कि ऐ मुहम्मद (स0)! अल्लाह आपको खुशख़बरी देता है उस पैदा होने वाले की जो फातिमा (अ0) के पेट में है और आपकी उम्मत उसे क़त्ल करेगी। पैग़म्बर (स0) ने जवाब दिया मुझे उस बेटे की ज़रूरत नहीं जिसको मेरी उम्मत क़त्ल करेगी। जिबरील आसमान पर गए और फिर पलट कर आए और वही बात दुहराई और वही जवाब सुना, तीसरी बार जिबरील ने कहा अल्लाह आपको खुशख़बरी देता है इस बात की कि वसिय्यत और इमामत उस पैदा होने वाले की औलाद में होगी, अब पैग़म्बर राज़ी हो गए।

दूसरी आयत हज़रत (स0) के मदीने से रुख़सत होने के बारे में है इरशाद होता हैः–''उज़िना लिल्लज़ीना युक़ातिलून बिअन्नहुम ज़ुलिमू व इन्नल्लाहा अला नसरिहिम लक़दीर'' (सूर–ए–हज आयत 39)

''जिन मुसलमानों से काफिर लड़ते थे क्योंकि वह बहुत सताए गए इस वजह से उन्हें भी जिहाद की इजाज़त दी गई और खुदा उन लोगों की मदद पर यक़ीनन ताक़त रखने वाला है।''

इमाम सादिक़ (अ0) से एक रिवायत लिखी गई है कि यह आयत अली, जाफर व हमज़ा (अ0) के लिए नाज़िल हुई और सच हो गई हुसैन इब्ने अली के लिए। क्योंकि इमाम मज़लूम को मदीने में रहने नही दिया गया बल्कि कहीं रहने नही दिया गया। उनके लिए कहीं भी अमन नही था यहाँ तक कि इमाम ने फरमाया अगर मैं जानवर के सूराख़ में छुप जाऊँ तो भी वह मुझे

निकाल कर क़त्ल कर देंगे।

तीसरी आयत, हुसैन (अ0) ही नफ्से मुतमइन्नह हैं। इरशाद होता है : ''या अय्यतुहन नफ्सुल मुतमइन्नह...........'' (सूर–ए–फ़ज्र आयत 28)

''ऐ नफ्से मुतमइन्नह पलट आ अपने रब की तरफ।'' और यक़ीनन इमाम मज़लूम साहब नफ्से मुतमइन्नह थे, जो अल्लाह को पहचान लेता है और उसकी ताक़त और बड़ाई को समझ लेता है वह अल्लाह को दोस्त रखता है, और जो अल्लाह को दोस्त रखता है उस से राज़ी रहता है और उसकी तरफ से जो मुसीबतें उस पर पड़ती हैं उस से राज़ी रहता है, बल्कि सख़्त से सख़त मुसीबतों और परेशानियों के वक़्त उसका सुकून और बढ़ जाता है और इस बात का मिस्दाक़ हुसैन (अ0) की पाक ज़ात है।

चौथी आयत में जुल्म से मुराद हुसैन (अ0) की शहादत है। इरशाद होता है : ''वमन कुतिला मज़लूमन फक़द जअल्ना लिवलिय्यिही सुल्ताना फला युसरिफ फिल क़तलि''

जो मज़लूम क़त्ल होता है हम उसके वली को बदले का इख़्तियार दे देते हैं लेकिन उसे भी चाहिए कि क़त्ल में हद से आगे न बढ़ जाए।

हम कहते हैं कि मज़लूम क़त्ल होने के कई मानी हैं जो सब इमाम मज़लूम पर सही आते हैं। एक मानी मज़लूम के यह हैं कि उन पर हमला किया गया, उनके साथियों और मददगारों को शहीद किया गया, उनका पाक जिस्म ज़ख़्मों से भर गया, कोई हिस्सा न बचा जो ज़ख़्मी न हुआ हो, यहाँ तक कि गुलु–ए–मुबारक पर भी ज़ख़्म लगा। इसीलिए दुआ में आया है :– ''उनसिदुका दमल मज़लूम'' तुमको क़सम है खूने मज़लूम की।

दूसरे मानी मज़लूम होने के क़त्ल की हालत में है। मुस्तहब है कि कुर्बानी के वक़्त चाकू तेज़ हो, जानवर को दूसरे जानवर के सामने ज़िबह न करें और उसके हाथ पैर न बाँधें, ज़िबह से पहले पानी पिलाएँ। लेकिन हुसैन (अ0) के क़त्ल के वक़्त इन कामों में से कोई काम नही किया गया बल्कि इमाम मज़लूम को प्यासा ज़िबह किया गया। तीसरे मानी मज़लूम के क़त्ल के बाद की मज़लूमियत है, लिबास उतारना, बदन के हिस्सों को काटना, और लाश को बिना कफन–दफन के छोड़ना यह भी हुसैन (अ0) से जुड़ा हुआ है।

पाँचवीं आयत हुसैन के क़ातिलों से बदला। इरशाद होता है :– ''वइज़ल मौऊदतु सुइलत। बिअय्यि ज़म्बिन कुतिलत।'' (सूर–ए–तकवीर, आयत 8, 9)

इमामे सादिक़ (अ0) से रिवायत है कि यह आयत इमाम हुसैन (अ0) की शान में नाज़िल हुई। आयत के ज़ाहिरी मानी हे जब ज़िन्दा दफन की जाने वाली लड़कियाँ क़यामत के दिन सवाल करेंगी कि किसी जुर्म में उन्हें क़त्ल किया गया है। लेकिन मौऊदा के हक़ीक़ी मानी हुसैन (अ0) अपने घर वालों के साथ हैं। क्योंकि मौऊदा का मतलब है ज़मीन के अन्दर बन्द करना, और साँस रुकना, भूख व प्यास के साथ और इमाम हुसैन (अ0) और उनके घर वाले आशूर की सुब्ह से अस्र तक इसी हालत से जुड़े थे और उन्हीं से अल्लाह तआला सवाल करेगा किस गुनाह के बदले उन्हें क़त्ल किया गया।

छठी आयत ज़ब्हे अज़ीम है मुराद हुसैन (अ0) हैं :– ''वफदैइनाहु बिज़बहिन अज़ीम'' (सूर–ए–साफ्फात, आयत 107)

''और हम ने इस्माईल का फिदया एक बड़ी कुर्बानी को बना दिया।''

इस आयत में कर्बला के क़िस्से और इमामे मज़लूम की बड़ी अज़ीम शहादत का ज़िक्र है।

bnkjk

eq[; lekpkj

bRrgkn cSuqy eqfLyehu dk 'khjkt+k u fc[kjsusdh eksykuk dYcs tokn lkgc dh vihy

y[kuÅA शीआ धर्मगुरु मौलान सैय्यद कल्बे जवाद नक़वी ने एक संवाद्दाता सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए अवाम से इत्तेहाद बैनुल मुस्लेमीन का शीराज़ा न बिखेरने की अपील की। उन्होंने कहा कि विभिन्न फ़िरक़ों के अलग–अलग पर्सनल लॉ बोर्ड की कोई ज़रूरत नही है बल्कि वर्तमान पर्सनल लॉ बोर्ड में हर फ़िरक़े को उसकी आबादी के अनुपात में प्रतिनिधत्व मिलना चाहिए। उन्होंने ओलमा व खुतबा से भी गुज़ारिश की कि वह मिम्बर का इस्तेअमाल क़ौम की इस्लाह के लिए करें न कि क़ौम में इख़्तेलाफ पैदा करने के लिए। उन्होंने नौ–गठित पर्सनल लॉ बोर्डों के सवाल पर जवाब देते हुए कहा कि गली–गली में पर्सनल लॉ बोर्ड एक राजनीतिज्ञ पार्टी के इशारे पर इसलिए बनाये जा रहे हैं ताकि मुसलमानों की आवाज़ को ख़त्म किया जा सके, यह एक सोची समझी सियासी साज़िश है।

et fyl s vksyek&,&fgUn dk iqu xBu

उन्होंने वर्तमान आल इण्डिया पर्सनल लॉ बोर्ड से भी पुरज़ोर अनुरोध किया है कि पर्सनल लॉ बोर्ड में शीओं की नुमाइन्दगी में इज़ाफा किया जाय और शीओं की आवाज़ को पूरी अहमियत के साथ सुना जाना चाहिए। उन्होंने पत्रकारों को बताया कि मजलिसे ओलमा–ए–हिन्द को पुर्नगठित करने के लिए भी प्रयास किया जा रहा है ताकि शीआ ओलमा अपनी आवाज़ को एकजुट होकर उठा सकें। उन्होंने बताया कि इस संगठन का गठन आल इण्डिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड के पूर्व उपाध्यक्ष मौलाना सैय्यद कल्बे आबिद साहब नक़वी जायसी, मौलाना मोहसिन नवाब और मौलाना सैय्यद शबीहुल हसन साहब मरहूमीन ने की थी। इस सिलसिले में उन्होंने मुहर्रम के बाद ओलमा व वाएज़ीन की एक कुलहिन्द कांफ्रेंस बुलाने का भी एलान किया।

इससे पूर्व शीआ ओलमा, खुतबा व वाएज़ीन मुशावरती कांफ्रेन्स में ओलमा से पुरज़ोर अपील करते हुए मौलाना कल्बे जवाद साहब ने कहा कि मुहर्रम की मजालिस में ज़ाकिरीन ऐसी मजालिस न पढ़े जिससे किसी दूसरे समुदाय के दिलों को ठेस पहुँचे बल्कि ऐसे अल्फ़ाज़ में अपनी तक़रीरें करें ताकि तमाम मज़ाहिब से ताल्लुक़ात बेहतर बनाए जा सकें, फ़िरक़ापरस्त ताक़तों की साज़िशों से अवाम होशियार किया जा सके, मदरसों की आज़ादी को बाक़ी रखा जा सके, उन्हें सरकारी मदद दिलायी जा सके, इस्लामी शिक्षा को आम करने, मिमबरे रसूल का सही इस्तेअमाल, वक़्फ़ जायदादों की हिफाज़त के साथ–साथ अज़ादारी को भी परवान चढ़ाया जा सके।

bZku ds /kkfeZd usrk dkopZLo [kRe djusesa vejhdk dHkh lQy ughagksxk

rgjkuA ईरान के रूहानी धर्मगुरु आयतुल्लाह सैय्यद अली ख़ामेनाइ ने इस्लामी गणतंत्र ईरान के ख़िलाफ अमरीकी राष्ट्रपति जार्ज बुश के उस कथन, 'जिसमें कहा गया है कि ईरान दहशतगर्दों को पनाह देने वाला मुल्क है', के इलज़ाम को रद्द करते हुए कहा कि ईरान के धार्मिक सत्ता को ख़त्म करने में अमरीका कभी सफल नही हो सकेगा।

ईरानी मीडिया ने रूहानी पेशवा आयतुल्लाह सैय्यद अली खामेनाइ के हवाले से कहा है कि कमज़ोरों के अधिकारों की रक्षा करने और ज़ालिमों का विरोध करने की वजह से ईरानी इस्लामी गणतंत्र अन्तर्राष्ट्रीय भू–माफियाओं के हमले का शिकार रहा है। उन्होंने विश्वविद्यालय के छात्रों को सम्बोधित करते हुए कहा कि जूनियर बुश पाँचवें राष्ट्रपति हैं जो ईरानी क़ौम और इस्लामी गणतंत्र को तबाह करना चाहते हैं, उन्होंने आगे कहा कि ''वर्तमान अमरीकी राष्ट्रपति भी उतना ही कामयाब रहेंगे जितना कि उनके पूर्व के राष्ट्रपति जिमीकार्टर, रोनॉल्ड रीगन, जार्ज बुश (सीनियर), बिल किलंटन हुए थे।''

: gkuh isokvk; rqYykg l S; n vyh [kkesukb

'khv k vkfyesnhu ekSykuk dYcst okn dhd ;knr esa

bekeckMk+ fl Cr Sukckn esa ukt k,t +dCt s+ dsfojk/k esa t kjnkj t uçn'ku
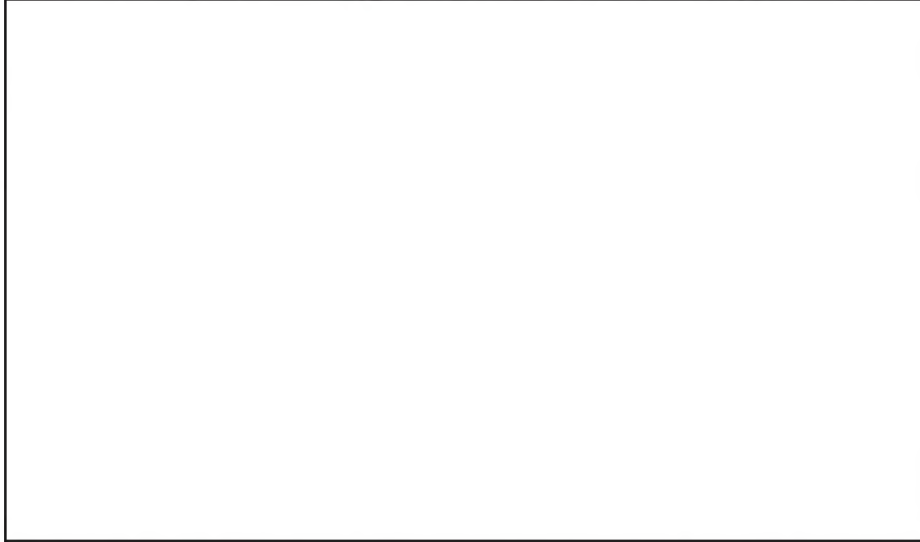
y[kuÅ A हज़रतगंज स्थित एतिहासिक इमामबाड़े वक़्फ़ सिब्तैनाबाद पर नाजाएज़ क़ब्ज़ों के विरोध में इमामबाड़े के मुख्य द्वार पर ज़बरदस्त जनप्रदर्शन को सम्बोधित करते हुए शीआ धर्मगुरु मौलाना सैय्यद कल्बे जवाद साहब ने घोषणा की कि ''अगर मुलायम सिंह सरकार ने मुहर्रम से पूर्व शीआ समुदाय की माँगों को पूरा नहीं किया तो अब बातचीत और प्रदर्शन न करके वे सीधी कार्यवाही करने के लिए स्वतन्त्र होंगे।'' उन्होंने कहा कि मुहर्रम की मजालिस के दौरान जमा होने वाले लाखों शीआ सिब्तैनाबाद इमामबाड़ा ख़ाली कराने के लिए अगर सड़कों पर उतर आए तो प्रशासन को उन्हें सम्भालना नामुमकिन हो जायगा।

''या हुसैन'' के नारे लगाते हुए नमाज़े जुमा के बाद एक जुलूस की शक्ल में मौलाना कल्बे जवाद के नेतृत्व में प्रदर्शन करने के लिए प्रदर्शनकारियों का जनसैलाब इमामबाड़ा सिब्तैनाबाद और कई अन्य इमामबाड़ों से भू–माफियाओं के नाजाएज़ क़ब्ज़े को हटाने के लिए सड़कों पर उतर आया था।

इस अवसर पर मौलाना कल्बे जवाद साहब ने कहा कि ''मुलायम सिंह यादव संविधान को अनदेखा कर रहे हैं और पिछले एक वर्ष से हम बातचीत करते–करते थक गए हैं इसलिए अब सरकार व प्रशासन से वार्तालाप करने से कोई लाभ नही होगा। उन्होंने आगे कहा कि इमामबाड़ा सिब्तैनाबाद, मस्जिदे तसव्वर जहाँ, मस्जिदे जाफर हुसैन में नाजाएज़ क़ब्ज़ेदारों से एल0डी0ए0 किराया वसूल करता है इसलिए अब प्रादेशिक सरकार कोई बहाना भी नही कर सकती है कि उनके अख़्तियार से यह मामला बाहर है।

उन्होंने साफ तौर पर कहा कि कोई भी धर्म अपने धार्मिक स्थलों की बेहुरमती बर्दाश्त नही करता तो हम और हमारी क़ौम अपने इमामबाड़ों पर नाजाएज़ क़ब्ज़े कैसे बर्दाश्त कर सकते हैं? उन्होंने अज़ादारी की चर्चा करते हुए कहा कि यौमे आशूरा (दस मुहर्रम) को निकलने वाली हुसैनाबाद की शाही मोमी ज़रीह जो पिछले पच्चीस वर्षों से नही निकाली जा सकी है जिसका मुतालबा हम निरन्तर करते आ रहे हैं लेकिन प्रशासन और सरकार इस ओर कोई ध्यान नही दे रहा है।